Chap- 4

अध्याय - चार

साठोत्तरी हिन्दी काव्य की सामान्य प्रवृत्तियाँ :-

1. साठोत्तरी हिन्दी काव्य, आख्यान और मिथक, विविध संदर्भ ।

2. पौराणिक आख्यानों की प्रासंगिकता एवं समाज चेतना ।

अध्याय - चार

साठोत्तरी काव्य का सृजन देश की बदलती हुई राजनैतिक परिस्थितियों एवं सामाजिक मूल्यों से अनुप्रेरित रहा है । पौराणिक - आख्यानक संदर्भ प्रासंगिक अर्थों में अपनी सार्थकता स्थापित करने में प्रयत्नशील थे । रचनाकारों को पौराणिक कथ्य अपने काव्य - कार्य के लिए एक पका - पकाया मुद्दा था, वे उसे थोड़ा सा तराश कर सलीके से सामने रखना चाहते थे । कुछ मेधावी कवियों ने ये सफल उपक्रम प्रस्तुत भी किए और फिर उनका अनुवर्तन भी हुआ ।

आख्यानक रचनाओं में प्रासंगिकता की निहिति जिन परिस्थितियों के तहत संभव हो सका एक दृष्टि उस वातावरण पर भी डाल लेना औचित्यपूर्ण ही होगी । अस्तु ।

साठोत्तरी कविता को जब हम भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू के युग के अवसान के साथ जोड़कर देखें, तो यह आवश्यक हो जाता है, कि हम नेहरू युग के राजनैतिक - सामाजिक - आर्थिक आयामों पर दृष्टिपात करें, तो, हमें एक समाप्त होता हुआ युग आने वाले समय को देता है । भारत की आजादी के डेढ़ दशक बाद के भारतीय इतिहास, भारतीय समाज में विकास और उपलब्धियों के आंकड़ों के बावजूद सामाजिक-आर्थिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में जो भयानक कठिनाईयाँ दिखाई पड़ती है, उनके बहुत कुछ बीज हमारे स्वाधीनता आंदोलन के ही मूल चरित्र में थे । जवाहर लाल नेहरू ने एक समय हमारे राष्ट्रीय आन्दोलन को बुर्जुआ आन्दोलन कहा था, इसका अर्थ यह नहीं था, कि इस आन्दोलन का एक मात्र निर्माता बुर्जुआ वर्ग था, या फिर कांग्रेस पार्टी ही केवल बुर्जुआ वर्ग की मांगों का समर्थन करती थी, इसका अर्थ यह था कि भारतीय जनता का साम्राज्यवाद विरोधी संघर्ष बुर्जुआ विचार प्रणाली के निर्देशन में चलाया जा रहा था, और उसका उद्देश्य बुर्जुआ प्रणाली के अनुसार सामाजिक-आर्थिक विकास करना था, यह मध्यमवर्ग का आन्दोलन नहीं था, बल्कि मध्यमवर्ग के नेतृत्व में सम्पूर्ण भारतीय जनता का आन्दोलन था । [1]

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद का भारत एक ओर सामन्तवादी-सामाजिक संरचना में जकड़ा था, और दूसरी ओर भीषण आर्थिक संकट में स्वतन्त्रता प्राप्ति

---

1. साठोत्तरी हिन्दी कविता की परिवर्तित दिशाएँ - डॉ० विजय कुमार -पृ०- 10

के बाद राष्ट्र का नेतृत्व जिस शहरी अभिजात और उच्च वर्ग के संस्कारों वाले नेतृत्व के पास आया उसके पास विकास की अवधारणा पश्चिम के विकसित औद्योगिक ढाँचे पर आधारित थी, नेहरू ने विकास की जो कल्पना की थी वह पूँजीवादी ढ़ाँचे को सामन्तवादी आधार पर खड़ा करना था, "नेहरू" जैसे लोग समाजवाद का एक ही अर्थ समझते थे, कि सम्पत्ति का राष्ट्रीयकरण कर दो । सरकारी कब्जे में आने के बाद इस सम्पत्ति का चाहे जैसा प्रबन्ध हो, प्रशासन में पनपती हुई एक ऐसी जाति अफसर वर्ग की चाहे जैसी जीवनशैली, आर्थिक आधार और मूल्य चेतना हो । इन सारी बातों को समाजवादी वाली बहस में अप्रासंगिक माना गया । एक लम्बे समय तक यह माना जाता रहा, कि भारत की समस्याएँ प्रशासनिक नहीं है, केवल आर्थिक आयोजना ही भारत की असली समस्या है, दरअसल यह एक पूँजीवादी प्रचार है, जिसे तीसरी दुनियाँ में औद्योगिक समाजों ने अपने औपनिवेशक हितों के लिए फैलाया है, भारत में सत्तासीन वर्ग में अपने बनें रहने के लिए इस तर्क का इस्तेमाल किया, क्यों कि समस्याओं को आर्थिक बताकर ही प्रशासन तंत्र को ज्यों का त्यों बनाए रखा जा सकता था । आजादी की लड़ाई के दौरान राजनीति को मिले जनाभिमुख चरित्र के आधार पर देश में एक ऐसा लोकतंत्रीय ढांचा खड़ा किया जाना चाहिए था, जिससे आर्थिक विकास की अवधारणा में सब से पहले समाज में व्याप्त अन्तर्विरोधों से लड़ना होता । §1§

आर्थिक विकास की योजनाओं और राजनैतिक, सामाजिक स्थिति के कारण पश्चिम के जिस विकसित औद्योगिक ढ़ाँचे को ज्यों का त्यों अपनाना चाहा, उसमें श्रम और पूँजी पर जोर है, सन् 1984 में अर्थात् आजादी के 37 वर्ष बाद भी राष्ट्रीय आय की विकास दर 3.5 पर ही ठहरी हुई है, विकास के तमाम दावों और प्रचार के बावजूद संसार में भारत का स्थान प्रति व्यक्ति औसत आय की वृद्धि दर से आज भी 71वां है । इसी अवधि की दौरान कृषि की विकास दर भी औसतन 2.6 प्रतिशत सालाना रही है, और यह बात आश्चर्यजनक लग सकती है, कि कृषि की विकास दर का यह प्रतिशत 1967 में आरम्भ हुई हरित क्रान्ति के बाद भी बढ़ा नहीं है । §2§

---

1. साठोत्तरी हिन्दी कविता की परिवर्तित दिशाएँ - विजय कुमार-पृ0- 11
2. -वही- पृ0 - 12

भारत में भूमि सुधार कानून बड़े किसानों के दबाव के कारण लागू नहीं किये गये, आज भी कितनी जमीन बड़े किसान दबाये बैठे हैं, जिन पर सरकार को झुकना पड़ता है । एक जानकारी के अनुसार जून- 1983 को समाप्त पिछले 36 वर्षों में केवल 20 लाख एकड़ भूमि अर्थात् देश की कुल- 3470 लाख एकड़ सिंचित भूमि का केवल 0.58 प्रतिशत भाग ही भूमिहीन किसानों के बीच वितरित किया गया है, गाँवों में कितनी अधिक विषमता रही है, यह बात इस तथ्य में जानी जा सकती है, कि 1984 से 1988 में भी गाँवों में 60 प्रतिशत से अधिक आबादी के पास ग्रामीण क्षेत्र की कुल भूमिका केवल 10 प्रतिशत हिस्सा है, ग्रामीण जनता में 2% धनी किसानों के कब्जे में कुल कृषि योग्य भूमि का 25% से अधिक हिस्सा है । §1§

शहरों में अचल सम्पत्ति के वितरण के सम्बन्ध में कोई सांख्यिकी उपलब्ध नहीं है, परन्तु भारतीय रिर्जब बैंक के कुछ अस्थायी आंकड़े बताते हैं, कि 1961 और 1971 में शहरों में 1.2 सर्वाधिक सम्पन्न वर्ग के पास शहरी क्षेत्र में आंकी गयी, कुल सम्पत्ति का 27 प्रतिशत हिस्सा था, दरअसल पहली दो पंचवर्षीय योजनाओं में गरीबी को अलग से एक विकराल समस्या के रूप में देखने की प्रवृत्ति हमारे नीति निर्माताओं में भी ही नहीं, आर्थिक विकास और आर्थिक समता को एक मानकर शासक वर्ग यह तर्क देता था, कि उत्पादन में वृद्धि के साथ-साथ गरीबी अपने आप दूर हो जायेगी, गरीबी की रेखा के गणित की शुरूआत तीसरी योजना के समय में अर्थात् सातवें दशक में आरम्भ हुई । स्व0 राम मनोहर लोहिया ने 1967 में यह तथ्य उजागर कर हमारे शासक वर्ग को चौंका दिया था । कि तमाम विकास और औद्योगिक उत्थान के बावजूद देश में 24 करोड़ से ऊपर तीन आने प्रतिदिन के खर्च पर जीने के लिए विवश है । §2§

भारत में 7वें दशक के दौरान लगभग 58% ग्रामीण आबादी और 50% शहरी आबादी - अर्थात् भारत की कुल आबादी का 57% हिस्सा गरीबी की निर्धारित सीमा रेखा के नीचे अपना जीवन निर्वाह कर रहा था, अर्थ विशेषज्ञों के अनुसार हमारे यहाँ ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी की सीमा रेखा से नीचे जीने वालों की

---

1. साठोत्तरी हिन्दी कविता की परिवर्तित दिशाएँ - डॉ0 विजय कुमार-पृ0-12
2. -वही- पृ0 - 13

संख्या प्रतिवर्ष 5 लाख की दर से बढ़ रही है, योजना आयोग के एक अनुमान के अनुसार 1979-80 में गरीबी की सीमा रेखा के नीचे जीने वाली आबादी 33.90 करोड़ थी, जो कि दुनियाँ के किसी भी एक देश में गरीबी की सीमा रेखा से नीचे जाने वाली विशालतम् आबादी है । §1§

विकास की मौजूदा बेमेल नीतियों के कारण इस संख्या के 2000 ईसवीं तक 50 करोड़ रूपये तक पहुँच जाने की आशंका है । पहली पंचवर्षीय योजना समिति के सचिव श्री त्रिलोक सिंह आज इस बात को स्वीकार करते हैं, कि हमारी प्रारम्भिक पंचवर्षीय योजनाएँ देश के भीतर के आर्थिक संसाधनों को विकसित कर सामाजिक ढ़ाँचे के असन्तुलन को दूर करने, विशाल जन समूह की प्राथमिक जरूरतों को पूरा करने और कृषि के क्षेत्र में बुनियादी परिवर्तन करने के बजाय विदेशी संसाधनों को जुटाने वाली "शापिंग लिस्ट" ही अधिक थी । §2§

"वाल्टर क्रोकर" ने पंडित जवाहरलाल नेहरू की जीवनी में लिखा है, कि सन् 1960 के अन्त तक भारत के ऋणों के रूप में - 18,000 लाख रूपये तथा अनुदानों के रूप में 60,000 लाख रूपये की विदेशी सहायता ले चुका था, वे लिखते हैं, कि पंचवर्षीय योजना एक शहरी मस्तिष्क द्वारा की गई आयोजना को दर्शाती है, नेहरू अधिकांश भारतीय राजनीतिज्ञ बिलकुल अनभिज्ञ होते हैं । यही कारण है, कि कृषि के विकास के लिए शाब्दिक चर्चाएँ हुई, और यही कारण है, कि जनताकार, भारत निर्मित जेट वायुयानों आदि की आयोजना पर खर्च होता रहा, यही कारण है, कि गाँवों ने जहाँ की भारत की 80% जनता कृषि पर निर्भर करती है, एक दशक के बाद और अत्यधिक प्रचार के बावजूद गाँवों की जनता इस आयोजना के बारे में कुछ नहीं जानती थी ।" §3§

भारत के इन्ही शहरों में दो-तीन रूपये कमाने और चार-पाँच जनों का परिवार लेकर गंदी बस्तियों में जीर्ण-शीर्ण चालों और अंधेरे दम घोंटू कमरों में जीवन गुजारने वाले एक ऐसे बाबू वर्ग का जन्म हुआ, जिसके लिए भोजन में आलू के अलावा अन्य सब्जी खाना मुनासिब नहीं होती, शहरों में जहाँ भी खाली जमीन के प्लाट या मैदान थे, वहाँ झुग्गी-कच्ची झोपड़ियों और गंदे अनधिकृत आवास

---

1. साठोत्तरी हिन्दी कविता की परिवर्तित दिशाएँ- डॉ० विजय कुमार -पृ०- 15
2. सेमिनार फरवरी - 1983
3. साठोत्तरी हिन्दी कविता की परिवर्तित दिशाएँ- डॉ० विजय कुमार-पृ० - 14

बनते चले गये, फुटपाथों पर भूखें, बीमार, फटे-हाल, लोगों की संख्या बढ़ती चली गई, बम्बई जैसे - महानगर में गगन चुम्बी आलीशान इमारतों और उन्ही के नीचे झोपड़ - पट्टियों का फैलता हुआ नरक हमारी अर्थ व्यवस्था की भीषण विसंगतियेां और बेमेल विकास की कुत्सित सच्चाई को उजागर कर रहा था । §1§

सामाजिक, आर्थिक अन्याय और नैतिक पतन के खिलाफ न तो कोई संगठन और न, ही कोई राजनीतिक पार्टी पहल कर रही थी, और न ही समाज में कोई सामूहिक दृष्टि, उद्देश्य की एकता, और वैचारिक प्रतिनिधित्व नजर आ रहा था, आयोजकों, सत्तारूढ़ तथा विपक्षी नेताओं और पूँजीपत्तियों की ओर से इस भयावह यर्थाथ पर कभी "भिलाई इस्पात", संयंत्र, कभी "भाखड़ा नंगल " बाँध, तो कभी अणुशक्ति केन्द्र की विशालता का बखान कर पर्दा डाला जा रहा था । एक राष्ट्र के रूप में हमारा मनो विज्ञान एक भीतरी क्षय की ओर संकेत कर रहा था । §2§

प्रसिद्ध गाँधीवादी चिंतक सुगत दास गुप्त का कथन है " कि दाँतों के लिए अधिक उपयोगी और सस्ते नीम या बबूल की दातुन छोड़कर कॉलिनास का इस्तेमाल करते ही आदमी विकास के दायरे में आ जाता है, भले ही रहन-सहन की मूल सुविधाएँ वह तेजी से खोता जा रहा हो, लेकिन इस परिचित दायरे के बाहर एक दुनियाँ और है, कॉलिनास इस दुनियाँ की सामाजिक-राजनीतिक और आर्थिक जिन्दगी को उजाड़ रहा है, यह दृश्य इसलिए नहीं दिखता क्यों कि दोनों दुनियाओं के बीच की खाई बहुत चौड़ी है, और एक समाज के तौर पर हम गरीबी का एहसास खो चुके हैं । गरीबी एक "टेबू" बनती जा रही है, विकास का यह चक्र असल में गरीबी का चक्र है, और यह तब तक जारी रहेगा, जब तक हम उपभोक्ता समाज की समृद्धि के भुलावे में पड़े रहते हैं । §3§

प्रसिद्ध अर्थशास्त्री स्वर्गीय डॉ0 दीनानाथ रांगणेकर का कथन कितना सटीक है कि "भारत आज अपने को एक अधूरी औद्योगिक क्रान्ति और एक खोखली हो चुकी प्राचीन संस्कृति के अवज्ञापूर्ण प्रतिरोध के बीच ठहरा हुआ पा रहा है, यह उसी जटिल द्वैत का पहलू है, जो एक आधुनिक औद्योगिक क्षेत्र के विकास तथा गरीबी ग्रस्त

---

1. साठोत्तरी हिन्दी कविता की परिवर्तित दिशाएँ -डॉ0 विजय कुमार -पृ0-15
2. -वही- पृ0 - 15
3. दिनमान, 16 अगस्त - 1980

कृषि क्षेत्र की लंगड़ाहट के बीच दिखाई पड़ता है, गाँवों में यह द्वैत हरितक्रान्ति के कारण और गहरा हुआ है, क्यों कि इसके परिणाम स्वरूप भूमि हीन मजदूरों और सीमान्त किसानों की संख्या काफी बढ़ी है, शहरी गरीबी वस्तुतः देहाती गरीबी का ही उच्छिष्ट है, लेकिन गाँवों में रहने वाले गरीब संख्या में ज्यादा बिखरे हुए और असंगठित है, गाँव के गरीब का कोई सहारा नहीं है, सरकार वहाँ जो कुछ करती है, उससे अन्ततः अमीरों और शक्तिशाली लोगों को ही फायदा होता है, हमारी पूरी प्रणाली भूमिपतियों व्यापारियों साहूकारों और राजनीतिक नेता उन्हे बिल्कुल छेड़ना नहीं चाहते । §1§

राजनीतिक सन्दर्भ :

1947 के बाद और उसके पहले भारत के राजनीतिक रंगमंच पर राष्ट्रीय काग्रेस का वर्चस्व रहा है, लगभग 65 वर्षों से काग्रेस का नाम स्वतंत्रता आन्दोलन से जुड़ा हुआ था, बड़े किसानों से लेकर बड़े पूँजीपतियों तक सभी सामाजिक वर्ग जो औपनिवेशिक काल में अपने निजी हितों पर दबाव के दौर से गुजर रहे थे, काग्रेस का समर्थन करते थे, इस तरह से काग्रेस किसी निश्चित विचारधारा पर आधारित दल न होकर अनेक वर्गों का मिलाजुला संगठन था, स्वतंत्रता के बाद वह एक राजनीतिक दल बनकर सामने आया । लेकिन उनकी विचारधारा में एकता न थी, "काग्रेस एक ऐसा बरगद का पेड़ था, जिसके नीचे धूप से बचने के लिए कोई भी राजनीतिक मुसाफिर शरण ले सकता था ।" §2§

"कृष्णकान्त मिश्र" ने अपनी पुस्तक "भारत की राजनीतिक प्रणाली" में लिखा है, कि 1956 में "बिड़ला" ने सार्वजनिक रूप से कहा कि वे काग्रेस दल के समाजवादी विचारों से सहमत हैं । उसके बाद "फेडरेशन ऑफ इंडियन चेम्बर्स ऑफ कामर्स" ने भी "बिड़ला" के वक्तव्य का समर्थन किया, अतः यह एक प्रश्न उठता है, कि यह काग्रेसी समाजवाद कैसा है, जिसका समर्थन "बिड़ला जैसे पूँजीपति भी करते हैं । §3§

---

1. रविवार - 15-21 - अगस्त - 1982
2. इंडिया इंडिपेंडेन्ट - चार्ल्स बीतल हाइम पृ.
3. भारत की राजनीतिक प्रणाली - कृष्ण कान्त मिश्र - पृ0- 270

" चार्ल्स बीतल हाइम के शब्दों में " कांग्रेस पार्टी अमरीका की दो बड़ी पार्टियों की तरह सबसे पहले एक राजनीतिक - "मशीन" है, जिसका उपयोग वे हित - समूह के लिए करते हैं, जो आर्थिक और राजनीतिक यथास्थिति को कायम रखना चाहते हैं । " §1§

गुन्नार मिर्डल के अनुसार "कांग्रेस एक अत्यधिक नमर दल है, जो मुलायम नीतियाँ अपनाकर वक्त गुजारना चाहता है, और ठोस काम करने से घबराता है।§2§

इस बात का सबसे स्पष्ट उदाहरण कांग्रेस शासन के दौरान उठाये गये सबसे क्रान्तिकारी कदम जमींदारी उन्मूलन के परिणाम में देखा जा सकता है, प्रारम्भ में भी ठोस कदम नहीं उठाये गये, जिसका परिणाम यह हुआ कि जो बड़े किसान थे, वे अपनी जमीन को किसी न किसी ढ़ग से बचाने में सफल हो गये, और छोटे किसान लम्बे समय से जमीनदारों के पास से लेकर खेती करते थे, उन्होंने उनसे जमीन छीन ली, बाद में भी किसानों को उनकी जमीन पर बड़े किसानों ने कब्जा नहीं दिया, और हमारी लोक सभा लाचार बनी यह दृश्य देखती रही, अगर ऐसा नहीं होता, तो आज भी जमीन सम्बन्धी झगड़े अदालतों में चल रहे हैं, - चकबन्दी आने के बाद भी छोटे किसानों को उनका हक नहीं मिल पाया, सबसे बड़ी बिडम्बना की बात तो यह है, कि कांग्रेस ने खूब जोर शोर से यह नारा देकर राजनीति के बल पर गरीबों का मसीहा बनने को तैयार है । §3§

जहाँ तक बुनियादी प्रश्नों का तर्क है, कांग्रेस की हमेशा यह चाल रही है, कि वह धुलमुल नीति के द्वारा केन्द्र में और राज्य में अपनी सत्ता कायम रखना चाहती है, इसके आभास तो आजादी के थोड़े दिन बाद ही दिखाई देने लगे थे । जब पहली पंचवर्षिय योजना असफल हुई और दूसरी पंचवर्षीय योजना भी फेल हो गयी तो, भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने अपने भाषण में यह तर्क दिया था, कि लोकतंत्रीय ढाँचा द्रुत विकास के रास्ते में एक रूकावट है । उनके कहने का मतलब यही था, कि नागरिक अधिकारों की मांगे और आर्थिक दुःख दोनों एक साथ नहीं उठाया जाना चाहिए । §4§

---

1. दि चैलेंज आफ वर्ल्ड पावर्टी - चार्ल्स बीतल हाइम
2. दि चैलेंज आफ वर्ल्ड पावर्टी - गुन्नार मिर्डल
3. साठोत्तरी कविता का सामाजिक - आर्थिक परिदृश्य - से उद्धृत
4. साठोत्तरी कविता का सामाजिक-आर्थिक परिवेश-डॉ0 विजय कुमार-पृ0- 19

भारतीय लोकतंत्र और भारतीय संविधान का ढ़ांचा इतना ठोस था, कि इसे कमजोर नहीं किया जा सकता था, किन्तु संविधान लागू होने के थोड़े ही दिनों में यह कार्य शुरू हो गया सन् 1952 में तीन राज्यों में आम चुनाव हुए, मद्रास, पेप्सू, और ट्रावनकोर, कोचीन, यहाँ पर कांग्रेस को सम्पूर्ण बहुमत नहीं मिला और उसने दल बदल की नीति अपनायी, और राज्यपालों का इस्तेमाल करके अपने पक्ष में इन राज्यों को कर लिया, इस परम्परा का विकास इतनी तीव्र गति में होने लगा, कि केन्द्र और राज्य टकराव की नीति अपनाने लगे, जनता की उपेक्षा कर के, लोक तंत्र और संविधान की खुलेआम आलोचना होने लगी । §1§

संविधान के लोकतांत्रिक प्रावधानों के गम्भीर उल्लंघन के खिलाफ एक मात्र गारंटी मजबूत विरोधी दल और सजग जनता ही हो सकते- संसदीय व्यवस्था के स्वस्थ विकास के लिए यह आवश्यक था, कि सर्वसत्ताधारी कांग्रेस विरोधी दलों को आर्थिक आयोजना और राजनीतिक महत्व के प्रश्नों में साझेदारी बनाती और उनमें से राष्ट्रीय नेतृत्व और दृष्टि को पल्लवित होने का मौका देना चाहिए, किन्तु ऐसा नहीं हुआ, समाजवादी दल ने भूमि सुधारों तथा अनेक मुद्दों पर अभियान किये, किन्तु उन्हे पूर्ण सफलता नहीं मिल पाई, आजादी मिलने के बाद 1947 में तेलंगना में किसानों के आन्दोलन को बुरी तरह दबा दिया गया, 1952 में केरल राज्य में जनता द्वारा चुनी गई सरकार को बर्खास्त कर दिया, और यही सिलसिला श्रीमती गाँधी ने भी अपने शासनकाल में अपनाया, जिसके कारण राज्यसत्ता और जनतांत्रिक चरित्र को काफी ठेस पहुँची ।

भारत में चौथे आमचुनाव के बाद इस सन्दर्भ में "डॉ० राम विलास शर्मा" ने कांग्रेस के बारे में टिप्पणी करते हुए कहते हैं, कि "कांग्रेस से शिकायत यह नहीं कि उसने देश में समाजवाद कायम नहीं किया शिकायत यह है, कि भारतीय पूँजीवाद के रास्ते में जो साम्राज्य बादी सामन्तवादी रूकावटें हैं, उन्हे उसने दूर नहीं किया । " §2§

भारतीय लोकतंत्र में जहाँ तक विरोधी दल का सवाल है, यहाँ कई पार्टियां है, जिसमें पहले की जनसंघ §आज भारतीय जनता पार्टी§ और स्वतंत्र पार्टी

---

1. साठोत्तरी कविता का सामाजिक-आर्थिक परिवेश - डॉ० विजय कुमार-पृ०- 19
2. आलोचना - अप्रैल-जून - 1967

और स्वतंत्र पार्टी इन पार्टियों का सम्बन्ध सामन्त-पूँजीवादी ताकतों से था । वामपंथी दलों में आपसी झगड़े होते थे, प्रजा सोशलिस्ट पार्टी और संयुक्त सोशलिस्ट पार्टी लगातार एकदूसरे के विरोध में वक्तव्य दिया करती थी, और भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी तथा मार्क्सवादी कम्युनिष्ट पार्टी ये एक दूसरे की नीतियों की आलोचना कर रही थी, वामपंथी दलों के इस बिखराव से भारतीय श्रमिक और किसानों की खूब अवहेलना हुई और ये संगठित नहीं हो पाये, इस सम्बन्ध में स्वर्गीय राम मनोहर लोहिया ने निराश होकर कहा है कि :-

" जहाँ तक पिछड़ी जातियों को विशेष अवसर देने के बात हैं, हिन्दुस्तान की जितनी पार्टियाँ हैं, सबकी सब गैर समाजवादी और दक्षिण पंथी हैं । स्वतंत्रता से पहले कांग्रेस में जो समाजवादी थे, उन्होंने जगह-जगह जमींदारी के खिलाफ आन्दोलन चलाते थे, और गिरफ्तारियाँ देते थे, आतंकवादी कार्यवाही में भी विश्वास करते थे, किन्तु आजादी के बाद उन्होंने पार्टी चलाने के लिए समाज में सदियों से शोषित और पिछड़े लोगों को संगठित नहीं किया । §1§

राजनीति से सबसे ज्यादा लाभ उन्ही लोगों को हो रहा है, जिनकी साठं-गांठ नेताओं से या फिर पार्टी के चम्मचों से हो । किसी भी पार्टी ने कोई ठोस कार्यक्रम नहीं तैयार किया, ज्यादातर ध्यान सभी पार्टियों ने गरीबी हटाने के बजाय गरीबी को बढ़ाया, गरीब, और दलित जनता की उदासी तक पहुँचने और उसे राष्ट्रीय सामाजिक आर्थिक जीवन को सुधारने के लिए कोई रचनात्मक कार्यक्रम नहीं हुआ, कुछ दलों में ऐसे लोग थे, जो पार्टी के संगठन का कार्य करते थे, और वे अपने ही जाति के अथवा सगे सम्बन्धियों को पार्टी का सदस्य बनाकर पद पर नियुक्त करते थे । जिसमें कांग्रेस ने नारा गरीबों का दलितों का देती थी, किन्तु टिकट देते समय वह जाति और अमीरी, गरीबी को अवश्य मुद्धा बनाती थी, यही कारण है, कि कांग्रेस ने देश में चौवालिस §44§ वर्ष तक राज्य किया, किन्तु उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान और भारत के अन्य राज्यों में ब्राह्मण और क्षत्रियों को ही मुख्य मंत्री बनाया, किसी पिछड़ी जाति के व्यक्ति को नहीं, यही कारण है, कि बहुजातीय राष्ट्रीयता के सिद्धान्त की अवहेलना हुई, और अवसर आने पर क्षेत्रीय, संकीर्ण और साम्प्रदायिक तत्वों का उदय हुआ । चौथे आम चुनाव

---

*. साठोत्तरी हिन्दी कविता - परिवर्तित दिशाएँ - डॉ0 विजय कुमार -पृ0- 20

से लेकर दसवीं लोक सभा के चुनाव तक केरल, तमिलनाडु, पश्चिम बंगाल, हरियाणा, गुजरात, पंजाब, हिमाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, आसाम, कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश, जैसे:- राज्यों में गैर कांग्रेस सरकारें बनीं, जिससे केन्द्र और राज्यों के बीच टकराव की राजनीति का जन्म हुआ ।

जातीयता और साम्प्रदायिकता के आधार पर वोट लेने की राजनीति ने इस देश में आजादी के बाद के दशक में ही संकीर्ण स्वार्थों की एक सिद्धान्तहीन राजनीतिक संस्कृति को जन्म दिया । इसी का परिणाम था, कि चौथे आम चुनाव के बाद विभिन्न राज्यों में वामपंथी दलों में भी यह बात स्पष्ट हो गई कि बुनियादी कार्यक्रमों के मामले में भी वे उतने ही समझौता परस्त हैं, जितना कि सत्तारूढ़ दल । चौथे आम चुनाव के बाद कई प्रान्तों में कांग्रेस सरकार का पतन और उसके स्थान पर संविद सरकारों का गठन उसके बाद एक सिद्धान्तहीन राजनीति के आजादी के बाद दूसरा भोहभंग बुद्धिजीवियों के मन में पैदा किया, जोड़-तोड़ और साठ-गांठ की इस राजनीतिक संस्कृति के कारण शोषित और साधनहीन वर्ग की शक्ति को कभी भी संगठित होने का अवसर नहीं मिला, सत्ता और व्यक्ति के बीच का फासला दिन प्रतिदिन बढ़ता ही गया, जनता पूरे तंत्र की अमानवीयता को देखने वाली मात्र एक असहाय दर्शक थी । नौकरशाही के फौलादी जूतों के नीचे सामान्य व्यक्ति की चीख दब कर रह गई थी । चारों ओर एक अव्यवस्था और आराजकता थी, सुप्रसिद्ध विचारक तारिक अली ने स्वतंत्रता के डेढ़ दशक बाद के पीड़क सन्दर्भ को निम्नलिखित शब्दों में व्यक्त किया है :-

" आने वाली कठिनाइयों के लिए न तो सरकार ने जनता को तैयार किया है, न ही उनका समर्थन किया है, भारतीयों का प्रमुख गुण है, सहनशीलता, उनके लिए भारी कराधान पहले से असहाय बोझ में एक और तिनका है । हर सरकारी विभाग में - निष्क्रियता और ढिलाई है, सिफारिशें हैं, कुछ लोग जरूरत की चीजें तुरन्त पा जाते हैं, कुछ को महीनों इन्तजार करना पड़ता है, "जनता की सरकार" के साथ बेहद रूखी है, लोग बसों की कतार में धक्का-मुक्की कर रहे हैं, और डाकघरों में अस्पतालों में रेलवे टिकट घरों में राष्ट्रीयकृत बैंकों में उपेक्षित भारतीय जनगण पसीने से नहाए - चीख-चिल्ला और बहस कर रहे हैं । पूरा सरकारी तंत्र उन्हे हिकारत और उपेक्षा से देख रहा है, जनता राज का केवल

यह अर्थ रह गया है, कि हर किसी को यह हक हासिल है, कि दूसरे को लातमारे चाहे जिस चीज का ध्वंस करें और पूरी तौर पर दुश्मनी का रवैया अख्तियार किये रहे । " §।§

सांस्कृतिक सन्दर्भ :

भारत वर्ष के सांस्कृतिक व्यवस्था के सम्बन्ध में जब हम विचार करते हैं, तब यह तय हो जाता है, कि प्राचीन काल से लेकर आज तक हमारे समाज में सांस्कृतिक व्यवहार में कितना परिवर्तन हुआ है, भारत ने क्या आधुनिकरण, वैज्ञानिक विकास उद्योगीकरण और कृषि के क्षेत्र में बहुत बड़े पैमाने पर विकास किया है, किन्तु अभी गरीबी की रेखा से बहुत कम ऊपर उठा है । किन्तु समानता और सामाजिक न्याय के क्षेत्र में जहाँ हम पहले थे, वहीं आज भी खड़े हैं ।

भारत में दूसरे महायुद्ध के बाद युवा पीढ़ी का गाँव से शहर की तरफ पलायन बहुत तेजी से बढ़ा, इससे भारतीय नयी पीढ़ी में बड़ी गिरावट आयी, आजादी के बाद वे रोजी रोटी कमाने के लिए गाँव छोड़कर शहर की तरफ जाने लगे, जहाँ उन्हे बहुत कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, जिसके फलस्वरूप उनमें तनाव की स्थिति ने जन्म लिया, शहरों में आकर उन्होंने देखा कि ये बड़ी - 2 उपाधियाँ खासकर भारतीय शिक्षा बिल्कुल निरर्थक है । विश्व विधालय की ऐसी शिक्षा प्रणाली से उन्हे दो वक्त की रोटी मुनासिब नहीं हो रही है । वहीं उसने पाया कि स्वतंत्र भारत में शिक्षा और सामाजिक प्रतिष्ठा के बीच भयावह अंतराल पैदा हो गया है ।

शहरों में पूँजीवादी संरचना ने कालेधन पर आधारित जिस नौदौलतिया संस्कृति को जन्म दिया है, उसमें ईमानदारी, श्रम मानवीयता, सादगी और सच्चरित्रता की कोई अहमियत नहीं रह गई है । उल्टे, सीधे तरीकों से चोरी - बेईमानी और तस्करी से लोग रातों-रात लखपति बन रहे हैं । चमक-दमक व दिखावे की जो संस्कृति पनप रही है, उसमें संघर्ष का मूल्य ही निरर्थक हो गया है । झूठ फरेब, चोरी, भ्रष्टाचार और बेईमानी की एक ऐसी "शार्टकट" संस्कृति से इस युग वर्ग का सामना हो रहा था, जहाँ उसे यह लगा कि व्यक्तित्व के परिष्कार की अब इस समाज को कोई आवश्यकता नहीं रह गई है, मानव मूल्य तेजी से विघटित

हो रहे हैं, चारों तरफ लूट-खसोट, आपाधापी और छीना झपटी का राज है, गाँव के एक बिल्कुल ही अलग परिवेश से आयी युवा पीढ़ी के लिए अनुभव के स्तर पर यह एक भयंकर शॉक था ।" ﴾1﴿

जन-साधारण वर्ग ने स्वतन्त्रता के मूल में बहुत से स्वप्न और सिद्धान्त संजो रखे थे, जिनके फलस्वरूप उसे नये - वातावरण में नये "सूर्य" की तलाश थी, जो बिना किसी भेदभाव के सबको आलोकित कर सके । क्यों कि "भारतीय स्वतन्त्रता का अर्थ है, सामन्तवाद, साम्राज्यवाद, आर्थिक और सामाजिक एवं सांस्कृतिक शोषण से मुक्त भारतीय मानव की प्रतिभा स्थापित करना ।" ﴾2﴿

वास्तव में हमारे वर्षों के आदर्शपूर्ण जन आन्दोलन की परिणति ऐसे - ढुल-मुल समझौते में हुई, जिससे हमें नाममात्र की ही मुक्ति मिल सकी, जिस व्यवस्था के विरूद्ध हम संघर्ष कर रहे थे, हमें उसी व्यवस्था को तिनके की तरह ग्रहण करना पड़ा ।" ﴾3﴿

इस अधकचरी स्वतंत्रता का परिणाम यह हुआ कि राजनीतिक, सामाजिक, तथा आर्थिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्रों में हमारी प्रगति उल्लेखनीय नहीं कही जा सकती, एक स्वतंत्र राष्ट्र से जो आशायें होती हैं, वे आज तक पूरी नहीं हुई, इसके लिए कांग्रेस सरकार, कर्मचारी, तथा जनता सभी न्यूनाधिक रूप से उत्तरदायी हैं । स्वतंत्रता के पश्चात् भारत की राष्ट्रीय सरकार को विश्व के सामने यह सिद्ध करना था, कि वह राजदन्ड, संभालने तथा अपनी सीमाओं की रक्षा करने में सर्वथा समर्थ हैं । जहाँ सरकारी अफसरों को देश के प्रति अपनी निष्ठा दिखाने की चुनौती मिली थी, वहीं जन साधारण को भूलना था कि वह मात्र शासित प्रजा नहीं है, और उसे नई राजनीतिक संस्कृति के सबक सीखने थे । ﴾4﴿

स्वतन्त्रता के पश्चात् जन साधारण में भविष्य के जो सुख स्वप्न देखा था, वह सामाजिक और सांस्कृतिक स्तर पर उन्नति और खुशहाली की जो कल्पनाएँ की थी, जब उनके सपनें साकार होने के लक्षण दिखाई नहीं दिये, तब जनता में असन्तोष की भावना ने जन्म लिया, जिसका परिणाम यह हुआ कि विरोध करने

---

1. साठोत्तरी हिन्दी कविता परिवर्तित दिशाएं- विजय कुमार- पृ0- 24
2. द्वितीय महायुद्धोत्तर-हिन्दी साहित्य का इतिहास- डॉ0 लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय - पृ0 - 9
3. आलोचना ﴾त्रैमासिक﴿ जुलाई-सितम्बर-72 समकालीन हिन्दी कविता में आजादी की तस्वीर - भारत भूषण अग्रवाल - पृ0 - 3
4. बिन्दु ﴾त्रैमासिक﴿ वर्ष 6 संयुक्तांक विशेषांक ﴾3-4﴿ "राष्ट्र निर्माण की प्रतिक्रिया-भित्तियाँ और गवाक्ष" - डॉ0 योगेश अटल - पृ0 - 53।

की राजनीति सामने आने लगी, लेकिन विरोध की इस राजनीति के सामने कोई वैज्ञानिक सामाजिक राजनैतिक दर्शन, तर्क संगत सांस्कृतिक दृष्टिकोण तथा भविष्य के लिए सामाजिक व्यवस्था की कोई स्पष्ट रूप रेखा नहीं थी । अक्सर यह विरोध की राजनीति निहित स्वार्थों के षड्यन्त्र का शिकार होती रहती है ।" (1)

यह सबसे बड़ी विडम्बना की बात तो यह थी, कि इस देश की जनता ने सत्तारूढ़ दल के सामने कोई सबल विरोधी दल नहीं बना पायी, सन्- 1967 के आम चुनाव के परिणामों ने देश को हिला दिया, सात राज्यों में कांग्रेस की घोर पराजय के बाद क्षेत्रीय पार्टियों का उदय हुआ, इसका परिणाम यह हुआ कि केन्द्र और राज्य सरकारें टकराव की नीति अपनाने लगी, और देश की जनता के भविष्य के प्रति प्रश्न चिन्ह लग गया । इस दशा पर विचार करते हुए "कुबेरनाथ राय" ने "ज्ञानोदय जून- 1967 में लिखते हैं, कि :-

"पूरब जायं के पश्चिम धाम जायं कि दक्षिण यह निर्णय नहीं हो पा रहा है । दक्षिण पन्थ उतना ही मजबूत लगता है, जितना वामपंथ और निर्दलियों की विशाल जनसंख्या इस बात को और सही बताती है, कि हिन्दुस्तान का मन संशयात्मा "टू बी और नाट टू बी" की अवस्था में है । " (2)

वर्षों से निराश जनता ने इंदिरा गाँधी को नई ताकत के रूप में देखा, और कांग्रेस दो टुकड़ों में बँट गई "इंदिरा गाँधी" ने "गरीबी हटाओ" नारा दिया, इससे भारत के सभी वर्गों पर इसका गहरा प्रभाव पड़ा । उन्होंने कई ठोस कदम उठाये, 1969 में बैंकों का राष्ट्रीय करण तथा 1970 में नरेशों के विशेषा - धिकार की समाप्ति के निर्णय से जनता में एक आशा की किरण दिखाई दी ।

एक दशक में तीन-तीन युद्धो ने भारत के राष्ट्रीय जीवन को बहुत प्रभावित किया है, साम्वादी दल का विभाजन हिन्दू मुस्लिम सम्बन्धों में तनाव बढ़ती हुई मँहगाई तथा शिथिल अर्थ व्यवस्था आदि प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में इन युद्धों की ही देन है । "आज इन्ही युद्धों का प्रभाव है, कि गाँधी के अहिंसा के सम्मोहन में फँसा यह देश आज हिन्सा को अंतिम रूप से त्याज्य नहीं समझता, यह वैचारिक धरातल पर एक क्रान्ति ही है, जो युद्ध के बिना घटित होने के लिए निश्चित ही अनेक वर्षों का दौर मांगती है । (3)

---

1. समकालीन हिन्दी साहित्य लेख-तथ्य सांची - सम्पादक - वेद प्रकाश अमिताभ तथा अन्य - पृ0 - 38
2. ज्ञानोदय जून - 1967 कुबेरनाथ राय - पृ0 - 21
3. संचेतना (त्रैमासिक) सितम्बर 66 हिन्दी कहानियाँ नवलेखन की सहजता (नरेन्द्र कोहली - पृ0 - 25 -36)

आजादी के बाद भारतीय संविधान में अपने भविष्य की जो तस्वीर देखी, वह परम्परित, पितृ सत्तात्मक और कर्षक समाज से भिन्न आधुनिक बौद्धिक औद्योगिक, तंत्रात्मक और समाजवादी जनतंत्रवादी समाज की तस्वीर है, यह समाज एक ओर सामुदायिक जीवन की आन्तरिक प्रेरणाओं का समाज होगा, और दूसरी ओर व्यक्ति को पूरी तरह स्वतंत्रता देने वाला, वास्तविकता यह है कि संविधान द्वारा प्रचारित यह समाज भारत में स्थापित नहीं हुआ ।" (1)

स्वतन्त्रता के बाद भारतीय जन-जीवन पर पाश्चात्य सभ्यता का दबाव बढ़ा है । सांस्कृतिक परम्पराओं और मूल्यों के प्रति उपेक्षा का भाव विकसित हुआ है " भारतीय मुद्रा का अवमूल्यन तो बाद में हुआ, भारतीय संस्कृति का अवमूल्यन स्वतंत्रता के बाद तुरन्त ही हो गया, भारतीय संस्कृति स्वीकरण और विकास के स्थान पर उन्हे पिछड़ा प्रतिगामी करार देकर उनके प्रति अश्रद्धा की भावना फैलायी गई ।" (2)

ऐसे समाज की जगह एक ऐसे समाज की रचना हुई, जिसमें सामाजिक व्यवस्था के नियम बड़े विकट थे, और दूसरी तरफ समाज के कुछ ठेकेदारों का इस पर नियंत्रण था, इस देश को नयी दिशा देने वाले नेताओं ने सामाजिक सन्दर्भों की खूब अवहेलना की, इसके साथ ही इसे राजनीतिक रंग रूप में मिलाया जिससे सामाजिक चेतना की नसकट गई, सातवें दशक में भारतीय सामाजिक परिस्थितियों में बहुत बड़ा परिवर्तन आया, कि इससे पहले इतना बड़ा परिवर्तन कभी नहीं आया था, और इस परिवर्तन के सभी क्षेत्रों को तथा वर्गों को स्पर्श किया, नारी स्वतंत्रता, युवा पीढ़ी का आक्रोश, मध्यम वर्ग की भूमिका, जाति व्यवस्था, भारतीय संस्कृति का अवमूल्यन हुआ ।

साठोत्तरी हिन्दी कविता का वास्तविक मूल्यांकन अनेक क्षेत्रों के द्वारा किया जाता रहा है, साठोत्तरी कविता में आक्रोश की अभिव्यक्ति का दूसरा-महत्वपूर्ण सन्दर्भ राजनीतिक है, जिस प्रकार समाज की रूढ़ परम्पराओं, अन्ध - निष्ठाओं दलित वर्ग के शोषण, भ्रष्टाचार, वर्ण वैषम्य, जातिवाद, पूँजीवाद के अभिशाप, वैज्ञानिक उपलब्धियों के भयावह परिणामों एवं सामाजिक जीवन की अन्य विसंगतियों के प्रति नयी कविता में राजनैतिक आक्रोश की अभिव्यक्ति हुई है ।

---

1. कल्पना अगस्त- 1967 लेख परम्परा और आधुनिकता - सुरेन्द्र चौधरी-पृ0-32
2. कुछ चन्दन की कुछ कपूर की - विष्णुकान्त शास्त्री - पृ0 - 230

सबसे दुर्भाग्य की बात आज यह है, कि गत् 44 वर्षों से राजनीति के क्षेत्र में सत्ता के प्रति लोलुपता, निम्न-कोटि की दलबन्दी (जिसे दल बदलू राजनीति की संज्ञा दी जा सकती है) अवसरवादिता भ्रष्टाचार, भाई भतीजावाद, साम्प्रदायिकता, प्रदेशवाद, जातिवाद, और ऐसी ही असंख्य बुराइयों के कारण सामान्य आदमी ही नहीं बल्कि समूचा राष्ट्र समकालीन राजनीतिक व्यवस्था के प्रति विद्रोह कर रहा है, युवा पेढी के नवलेखन में राजनीतिक परिवेश की असंख्य विसंगतियों को उभारा गया है, छठे दशक और सातवें दशक की सम्पूर्ण साहित्यिक रचना में राजनीतिक चेतना के विकृत और विश्रृंखलित स्तरों को क्रान्तिकारी शैली में अभिव्यक्त किया जा रहा है, एक उद्धरण देखिए :-

क्या हुआ
अगर दल विरोधी
कुछ औंध बुद्धि दबा दिये गये बर्फ में
निर्वासित हो गये
कर मरे
आत्म घात
क्या रक्खा है
कला - कला
शब्द अर्थ में
कई लाख सालों से
ठंडा हो रहा सूर्य
ठंढाता ही नहीं
क्या करें । " (1)

साठोत्तरी हिन्दी कविता ने कई रूप धारण किये, विद्रोह का एक रूप अकवितावादियों की मध्यकालीन कापालिक वृत्तियों में मिलता है, जो भाव बोध के स्तर पर रीतिकालीन कवियों के अधिक समीप था, जो अपनी जिघांसु, गलित और कुत्सित शब्दावली में कापालिकों के अधिक समीप था, इनका वाग्वी, नपुंसक और ऊलजलूल विद्रोह उतना ही हास्यास्पद था, जितना बीट, हिप्पी और टैपनिंग पीढ़ी का, विद्रोह का दूसरा स्वरूप "डॉन-क्विक जोटई" था, जो शाब्दिक नेजों से व्यवस्था सम्बन्धी शत्रु पर अन्धाधुन्ध प्रहार कर रहा था, इसकी प्रेरणा अस्तित्ववादियों और पाश्चात्य चिन्तकों के क्रान्तिकारी विचारों ने दी जो उस

---

1. देहान्त से हटकर - कैलाश वाजपेयी - पृ0 - 14

सबको भारतीय परिवेश पर लादना चाह रहा था, विद्रोहियों का तीसरा वर्ग कुछ समझदारी के साथ राजनीतिक चेतना को आत्मसात् करके राजनीतिक परक कवितायें लिख रहा था, एक ओर अकवितावादियों के सृजन में तथाकथित "देह की राजनीति" थी, तो दूसरी ओर इन कवियों की कविताएँ राजनीति विषयक थी यों राजनीति-विषयक कविताएँ लिखना इतना बुरा नहीं है, जितना राजनीतिक लक्चे से पीड़ित होना । §1§

साठोत्तरी हिन्दी कविता में मुख्य रूप से संघर्ष का जुझारू रूप सर्वत्र अभिव्यंजित हुआ है, "चाँद का मुँह टेढ़ा है" §मुक्ति बोध§ " कितनी नावों में कितनी बार"§अज्ञेय§ स्वर गंधा "कंकावती तथा मुक्ति प्रसंग §राजकमल चौधरी§ "मेपल" §प्रभाकर माचवे§ "जो बंध नहीं सका" §गिरिजा कुमार माथुर§ "चकित है दुःख" §भवानी प्रसाद मिश्र§ मृग और तृष्णा §हरिनारायण व्यास§ आत्मजयी §धर्मवीर भारती§ "मच्छली घर" §देवनारायण साही§ एक सूनी नाव §सर्वेश्वर दयाल सक्सेना§ अतुकान्त §लक्ष्मीकान्त वर्मा§ "शहर अब भी सम्भावना है" §अशोक वाजपेयी§ "सूरज सब देखता है" §जुग मंदिर तायल§ "त्रास" §विजेन्द्र§ "दिनारम्भ" माया दपर्ण §श्रीकान्त वर्मा§ सीढ़ियों पर धूप, आत्म हत्या के विरूद्ध §रघुवीर सहाय§ नागार्जुन, जगदीश गुप्त आदि साठोत्तरी कवियों में परिवेश की विसंगतियों, विरूपताओं और विकृतियों से जूझने की जो ललक है, उसका बहुत कुछ रूप "कमलेश" धूमिल, लीलाधर जगूड़ी और चन्द्रकान्त देवताले, तथा विष्णु विराट जैसे कवियों की कविताओं में देखने को मिलता है ।

प्रायः अनेक कवियों ने वर्तमान जीवन के तनाव द्वन्द्व, संघर्ष राजनैतिक, दुरभिसन्धियों, विडम्बनाओं, तथा आम आदमी की वर्तमान, नियति को अपनी कविताओं में परखा, टटोला और उद्घाटित किया है, धूमिल की "पटकथा" प्रमोद सिन्हा की "तलधर" जगूड़ी की "अनैतिक" कमलेश की "जख्कारू" विष्णु विराट की "एक रण वैचारणी है शेष" आदि कविताएँ वर्तमान युगबोध को समग्र निस्संगताओं के साथ उजागर करने में समर्थ है । रघुवीर सहाय की कविता "आत्महत्या के विरूद्ध" अपनी विशिष्ट बनाने की दृष्टि से बहुत हद तक सफल रहे हैं, इनकी कवितायें सामान्य जन जीवन की उपज होने के कारण अधिक मार्मिक बनी है, व्यंग्य परक चित्र बेमिसाल से बन गये हैं, जहाँ भाषा की बनावट अकृत्रिम और सहज है :-

कुछ पंक्तियाँ देखिए -

---

1. नयी कविता में राष्ट्रीय चेतना - डॉ0 देवराज पथिक -पृ0- 20
कादम्बरी प्रकाशन ए-55/1, सुदर्शन पार्क, नयी दिल्ली- 110015

गाँव - गाँव में दिया जनजन को
विश्वास
नेकराम नेहरू ने
कि अन्याय आराम से होगा
आमराय से होगा / नहीं तो कुछ नहीं होगा
गाँव का । §1§

समाज में दूसरों को हानि पहुँचाकर अपना उल्लू साधने की प्रवृत्ति पर अनेक प्रसंगों में कवि ने प्रहार : किये हैं । व्यंजनात्मक गरिमा की दृष्टि से कवि " रघुवीर सहाय " की कोई भी कविता चाहे फिर वह - संसद का भोला मंत्री, रामलाल, मन्थर भटकता मंत्री, मुसद्धी लाल महंत, तोंद मटका कर हँसती सभा, अकादमी की महापरिषद पिटा हुआ दलपति, खिसियाते कुलपति, भीमकाय, भाषाविद्, फुदकते सम्पादक और अध्यापक परिषद में आँख मारता गृहमंत्री - ही क्यों न हो, अनुभूति और अभिव्यक्ति दोनों ही छोरों पर मार्मिक छबि से युक्त है, हिन्दी कविता में सन्- 1960 के बाद तो प्रत्यक्ष और परोक्ष दोनों ही रूपों में गति और शक्ति प्रदान की है, इस सन्दर्भ में "नागार्जुन" का काव्य व्यंग्य दृष्टव्य है :-

1. कागज की आजादी मिलती,
ले लो दो - दो आनें में । §2§

2. बापू मरे ....
अनाथ हो गयी भारत माता ....
अब क्या होगा
हाय । हाय हम रहे कहीं के नहीं
लुट गये
.... रो - रोकर के आँख लाल कर ली धूर्तों ने । §3§

आज देश की जोड़-तोड़ की राजनीति से देश का तथा राजनीति का मूल्य गिर रहा है, लोगों को राष्ट्र के नाम दिये बलिदान और कुर्बानियाँ निरर्थक लग रही है, रघुवीर सहाय की इन पंक्तियों में मौलिकता दिखाई पड़ती है, जिसमें कवि जोड़-तोड़ की राजनीति में कवि को कोई आस्था नहीं है,

---

1. आत्म हत्या के विरूद्ध - रघुवीर सहाय - पृ0 - 20
2. हिन्दी की राष्ट्रीय काव्य धारा - एक समग्र अनुशीलन - डॉ0 देवराज पथिक पृ0- 336
3. -वही- पृ0 - 358

एक उद्धरण दृष्टव्य है :-

अपनी एक मूर्ति बनाता हूँ और ढहाता हूँ
आप कहते हैं कविता की है
क्या मुझे दूसरों की तोड़ने की फ़ुरसत है । §1§

साठोत्तरी हिन्दी कविता में गर्मजोशी, तनाव की उग्रता और खोज का भरपूर चिड़चिड़ापन तो है, ही साथ ही उसमें अपनी भाषा - अपना मुहाविरा और अपना लहजा भी निज का होने के कारण अनुभूति के सम्प्रेषण की ताजगी भी उपलब्ध है ।

साठोत्तरी हिन्दी कविता अथवा सातवें दशक की कविता में एक खास बात यह है कि अधिकतर कवियों ने परम्परा को लेकर चलते हैं, यद्यपि गठन के प्रति खीज और असंतोष की जहर परलक्षित होती है, कभी-कभी एक ही कवि ने एक ही बात को अलग-अलग ढ़ंग से कहने का प्रयास किया है । देखिए कुछ पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं :-

बीस साल
धोखा दिया गया
× × × ×
बीस बरस बीत गये/
लालसा मनुष्य की तिल-तिल कर मिट गई
× × × × × ×
बीस बरस
खो गये भर-में उपदेश में
एक पूरी पीढ़ी जन्मी
पली - पुसी क्लेश में । §2§
× × × × ×
और इतिहास में बीस साल का मतलब
ऐसी दीवार हो गया है
जिसके सामने विकल्प की जगह भी
सिर्फ दिवार है । §3§
× × × ×
यही क्या कम है कि मैं सैंत मैंत में
पिछले बीस साल से दुनिया का
महान गणतन्त्र कहला रहा हूँ ।§4§

---

1. आत्महत्या के विरूद्ध - रघुवीर सहाय - पृ0 - 10
2. -वही- पृ0 - 11
3. परमानन्द श्रीवास्तव)
4. कैलाश वाजपेयी

क्या मैं पूछ सकता हूँ
कि आपके संविधान के छाते के नीचे
कितने लोग आ सकते हैं
बरसों पहले आपको इसे बता देना चाहता था
जिसे बीस बरसों बाद
आपसे मुझे पूछना पड़ रहा है । ﴾1﴿

इस विषय में सलिल गुप्त का कथन है :- "साठोत्तरी कविता का अर्थ बिल्कुल भिन्न है, साठोत्तरी कविता साठोत्तरी पीढ़ी की कविता है, और साठोत्तरी पीढ़ी वह पीढ़ी है, जिसने 15 अगस्त 1947 को अपनी निर्बोध और भोली-भाली आँखों से स्वतंत्रता प्राप्ति का जलूस, ऊँची-ऊँची इमारतों पर लाल नीले रंग बिरंगे बल्ब देखे थे, स्कूल में स्वतंत्रता की मिठाई खाई थी, और दूसरे दिन त्यौहारों के समान उस दिन छुट्टी का भी आनन्द लेकर अपना बस्ता और पाटी नचाते हुए स्कूल चले गये थे, आज स्वतंत्रता - प्राप्ति के बीस बरस के बाद जब वह पीढ़ी अपनी जवान आँखे मलती है, तब स्वतंत्रता का एक बिल्कुल नया अर्थ उसकी आँखों में तैर जाता है, और व्यक्ति से लेकर अन्तरराष्ट्रीय समस्यायें महंगाई, टूटन, ऊब घुटन, धुआँ, कोलाहल, और सारी की सारी विश्रृंखलित स्थितियाँ, उसकी आँखों में प्रश्न चिन्ह बनकर चुभने लगती हैं और वह महसूस करने लगती है कि वह मलबा में जन्मी है । ﴾2﴿

साठोत्तरी हिन्दी कविता के कवियों की अनुभूति और अभिव्यक्ति इस तथ्य का प्रमाण है, कि आज का कवि सामाजिक, ऐतिहासिक राजनीतिक, परिवेश के प्रति चेतनाशील है, स्वाधीनता प्राप्ति के चौंवालिस वर्षों में राष्ट्र की आत्मा किस तरह उदास बनी है, इसे नयी कविता का कवि इस सत्य को उद्घाटित करने में हर स्तर पर बेचैन हैं, साठोत्तरी कविता की व्यापक काव्य दृष्टि में समय-सत्य और व्यक्ति - सत्य की समरसता मुखरित हुई है । ﴾3﴿

सन् 1960 के इर्द-गिर्द हिन्दी कविता में जो आक्रोश और विद्रोह का स्वर विशेष रूप से मुखरित होता दिखाई दिया है, उसे महज नयी पीढ़ी का शोर-शराबा और नारेबाजी का क्षणिक जलूस कहकर इन्कार नहीं किया जा सकता,

---

1. देवेन्द्र कुमार
2. भीड़ से हटकर - साठोत्तरी कविता - सम्पादक - सलिल गुप्त - पृ0 - 8
3. -वही- पृ0 - 9

वस्तुत: नयी पीढ़ी का वह आक्रामक रूप यहीं से ओजस्विता लेकर आगे बढ़ा है, जिसे कुछ काल बाद साठोत्तरी कविता की अभिधा से अलंकृत किया गया है, इस तथ्य में यथार्थ बहुत अधिक है, कि सन् 1960 के आस-पास के नये कवि ने पहली बार हिन्दी कविता के मठाधिशों और अधिष्ठाताओं को काव्य की नवल भास्वरता और नये तेवरों के साथ चुनौती भरे स्वर में ललकारा था ।

साठोत्तरी हिन्दी कविता के सम्बन्ध में "सलिल गुप्त" के निष्कर्ष मूल्यवान है "सलिल गुप्त" के अनुसार साठोत्तरी कविता का "मैं" वैयक्तिक न रहकर साठोत्तरी पीढ़ी का सामूहिक है, इस सन्दर्भ में सलिल गुप्त ने साठोत्तरी कविता की कतिपय विशेषताओं की ओर संकेत करते हुए लिखा है :-

" साठोत्तरी हिन्दी कविता का कवि " भीड़ या फारमूले में बँधकर कविता नहीं लिखता, और न कविता का उद्देश्य वादों या नारों को जन्म देना समझता है, अपने शिल्प के साथ उसका अपना व्यक्तित्व है, अपनी अनुभूतियाँ हैं, अपने विचार हैं, अपना चिंतन है, और उसकी अपनी आवाज है । साठोत्तरी कविता का कवि अभिव्यक्ति के ढ़ग पर नहीं बल्कि कथ्य की अधिकाधिक संप्रेषणीयता पर विश्वास करता है, साठोत्तरी कविता के कवि का व्यक्तित्व अन्तरराष्ट्रीय होकर भी राष्ट्र के अस्तित्व को स्वीकार करता है । §1§

साठोत्तरी हिन्दी कविता की चेतना मानववाद और समाजवाद की पोषक है, और उसकी भावना राष्ट्रीयता और देश प्रेम से ओत-प्रोत है, साठोत्तरी कविता का कवि कला के नाम पर कविता में शब्दों का जाल नहीं बुनता और न प्रयोग के नाम पर प्रयोग करता है, बल्कि नवजीवन का संकल्प ही उसका प्रयोग है, उसकी कविता जन-सामान्य की कविता है, साठोत्तरी कविता का कवि कविता लिखने का उद्देश्य केवल कला की संरचना धनार्जन अथवा आत्म-स्थापन नहीं मानता, बल्कि जन-क्रान्ति के द्वारा नये मूल्यों की स्थापना हेतु जन-सामान्य की कविता लिखता है । साठोत्तरी कविता का कथ्य आत्म, अचेतन अथवा सेक्सन होकर आत्म विस्फोट है, जो उपेक्षा दमन और नगण्य कहकर नकारने से जन्मा है । §2§

---

1. साठोत्तरी कविता - सम्पादक - सलिल गुप्त - भीड़ से हटकर - पृ० - 9
2. -वही- पृ० - 10

साठोत्तरी हिन्दी कविता का "मैं" वैयक्तिक न होकर साठोत्तरी पीढ़ी का सामूहिक है, साठोत्तरी कविता घुटन और संघर्ष से जन्मी वह प्रतिक्रिया है, जो भरी हुई मान्यताओं, विचारों और प्रणालियों के विरूद्ध, क्रान्ति का आह्वान करती है, साठोत्तरी कविता खन्डित स्थितियों को स्वीकारने और नये मूल्यों में जीने की क्षमता है, वह यथार्थ को संगठित कर नये स्वप्नों को स्थापित करती है, साठोत्तरी कविता वैज्ञानिक विकास के साथ मानवीय मूल्यों के विकास पर अधिक विश्वास करती है, साठोत्तरी कविता आत्मोन्मुखी न होकर बहिर्मुखी हैं और उसका नया धरातल है, और नयी पृष्ठभूमि विश्रृंखलित नहीं है । §1§

आज के राजनीतिक नेताओं में राष्ट्र की उन्नति के लिए नहीं बल्कि अपना निजी स्वार्थ में व्यस्त है । जनता को उनके नेतृत्व में आस्था नहीं और न ही कवि को उससे किसी प्रकार की सहानुभूति है, भूख अकाल, बाढ, और बीमारी की मानों जड़ ही वही है, "नागार्जुन" ने ऐसे नेताओं के प्रति अपना आक्रोश व्यक्त करते हुए कहते हैं :-

" हमारे प्यारे नेता जी
भूख अकाल बाढ़ बीमारी
रूढ़ि और अज्ञान
उमर से शासक स्वजनों की
नौकर शाही शान
परेशान है जनमत फिर भी
नवरचना में लीन
शांतिव्रती यह राष्ट्र नारा
संघ बद्ध स्वाधीन " । § 2§

साठोत्तरी कवि की मान्यता है, कि इस देश की जनता बैलों की तरह जीवन के बोझ को ढो रही है, पिता - स्थिति एक वक्तव्य में सुरेश सलिल की निम्नपंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं ।

तुम्हे जन्म देकर मैंने अच्छा नहीं किया मेरे वत्स ।
मेरे अभिमन्यु अच्छा होता कि
तुम जन्म लेने से पूर्व ही मर जाते, या.... या इतना
जाहिल होता मैं, इतना गुर्ख, कि न सुनता तुम्हे,

---

1. साठोत्तरी कविता सम्पादक - सलिल गुप्त - भीड़ से हटकर - पृ0 - 10
2. दूनबोल्गा गंगा जमुना आज हो रही एक - नागार्जुन ।

गर्भ - स्थिति में चक्रव्यूह की विघटन - कथा
और चौवालिस करोड़ बैलों के झुन्ड में छोड़ देता तुम्हे भी ।" §1§

संतान किस पिता को बुरी लगती है,? कौन पिता अपने मन के टुकड़ों को दाने-दाने के लिए तरसते देखकर तड़पता नहीं है, कौन बाप ऐसा नहीं है, जो अपने दुधमुँहे बच्चे की पेट की आग बुझाने के लिए किसी की जूठी पत्तल चाटते देख सकता है ? सुरेल सलिल ने भारतीय पिता की इस दशा को देखा, और इस शोषण के प्रति उनका पाषाण हृदय द्रवित हो उठा ।

पिता स्थिति : की निम्न पंक्तियाँ दृष्टव्य है :-

मेरे वत्स तुम्हे जन्म देकर मैंने अच्छा नहीं किया
क्यों कि रेशमी फूलों के गुच्छों जैसे - गमुआरे तुम्हारे
बाल, बिल्कुल सुबह - सुबह ताजा दूब पर,
जाग रही ओस - सी नरम तुम्हारी देह ।
कुलाचे भारती हिरनियों जैसी निश्छल तुम्हारी आँखें,
और दुनियाँ की किसी वस्तु से उदाहृत न की जा
सकने वाली तुम्हारी निरपराध किलकारियाँ,
के वांच की छीमियों - जैसी मृदुल अंगुलियाँ,
इस देश के काबिल नहीं है । §2§

राजनीतिक क्षेत्र में जितना भ्रष्टाचार है, उतना किसी क्षेत्र में नहीं, बल्कि इसका जन्म राजनीतिक क्षेत्र में ही हुआ, जिसके हाथ में सत्ता आयी वह अपने आपको सर्वेसर्वा समझने लगता है, चापलूसी करने वालों के साथ उसकी साठ गांठ है, रिश्वत और घूसखोरी के बाजार में वे विचरण करते हैं, स्वार्थपरता ही मात्र उनका उद्देश्य है। जिसे कवि ने उद्घाटित किया है ।

" जब से नेता जी के हाथ में आई है सत्ता
बढ़ गया है उनके
दौरों का भत्ता
उनके निर्वाचन क्षेत्र में तो उनकी मर्जी के वगैर
हिलता नहीं एक भी पत्ता
चपरासी तक के तबादले में
उनकी दखलन्दाजी है
मक्खन न लगानें वालों से
उन्हे खास नाराजी है ।

---

1. भीड़ से हटकर - साठोत्तरी कविता - सलिल गुप्त - पृ0 - 14
2. पिता स्थिति : - सुरेल सलिल - पृ0 - 14

बड़े - बड़े आई.ए.एस. अफ़सर रहते हैं खड़े
और नेता जी देखते हैं
जरूरी फाइलें
बिस्तर पर पड़े-पड़े
बे खुद कभी
रिश्वत नहीं खाते
"" "" ""
हमारे प्यारे नेता जी,
पूरी तरह स्वस्थ हैं
और देश के भविष्य के प्रति
एक दम आश्वस्त हैं । " (1)

"ललित शुक्ल" ने देश की वर्तमान दशा पर क्षोभ व्यक्त करते हुए भारत की एक सच्ची तस्वीर खींचनें का प्रयास किया है ।

तुम्हारा शहर फांसले की फसल
उगाता है
तुम्हारा गाँव अंधेरे की शराब
में मस्त है
खेतों - खलिहानों की बातचीत
बंजर कोरवों की अपनी तकदीर को
दी हुई लम्बी दरख्वास्तें
अन्धी फाइलों में बंद है । (2)

सरकार गाँवों में किसानों को जो कि गरीब हैं, हरिजन हैं, जिनके पास जमीन नहीं है, उन्हे पट्टे दिये गये हैं, किन्तु आज भी उन्हें जमीन के ऊपर कब्जा नहीं मिल रहा है, इस सम्बन्ध में सरकारी कार्यालयों में लोगों ने अपील किया है, किन्तु वर्षों से उस पर कोई कार्यवाही नहीं हो रही है । (3)

भारतीय न्यायालयों की दीवारों पर
टंगी हुई ईमानदारी
कुर्सियाँ
चुचुआते खून की मोहकता
ताजा खाल का आवरण, जरा खुले मैदान में,
बच्चों को शिक्षा का राशन बँट दूँ । (4)

---

1. अले असभ्यता - दिनकर सोनवलकर - पृ0 - 48
2. शिक्षा का राशन - ललित शुक्ल - पृ0 - 44
3. -वही- पृ0 - 46
4. -वही- पृ0 - 46

जिस देश में न्याय बिकता हो, कुर्सियों की छीना-झपटी चलती हो, देश की आधुनिक शिक्षा प्रणाली आजादी के बाद नीले आकाश की छत के नीचे धूलभरी धरती पर गिल रही हो, उस देश का भविष्य क्या होगा ? यह बहुत ही गम्भीर प्रश्न है "शिक्षा का राशन" नामक कविता में "ललित शुक्ल" को यही दुःख है ।

सलिल गुप्त ने सरकारी तंत्र का आज किस तरह से दुरूपयोग हो रहा है, उस पर व्यंग्य किया है, अपने स्वार्थ के लिए राष्ट्रीय हित को किस तरह न्यौछावर किया जा रहा है, इतने शक्तिशाली समाज और राष्ट्र को कैसे कंगाल बना रहे हैं । निम्न पंक्तियाँ "नए टेन्डर" नामक कविता की केन्द्रीय भावना को व्यक्त करती है ।

आओ हम बुद्धिजीवी
साहित्य, कला, धर्म
और राजनीति के ठेकेदार बनकर
कमायें पैसा,
जमायें नाम
बनाकर खोखली सीमेन्ट के बाँध । [1]

" गेहूँ की सोच " कविता के द्वारा कवि अपने देश की महाजनी सभ्यता की काली करतूत पर जहाँ व्यंग्य-प्रहार करता है, वहाँ खून-पसीना - बहाकर अन्न उगाने वाले किसान के प्रति अपनी मार्मिक सहानुभूति भी प्रदर्शित करता है ।

बहुत कुछ जायेगा लगान
कुछ जायेगी कर्ज, किश्त
बाकी रह जायेगी
झोपड़ियों की उन भूखी अंतड़ियों के लिए सूखी
एक बेर रोटी ।
क्या यह नीति खोटी नहीं ?
गेहूँ के मोती - से दाने जो पसीने से
उगाये, अरे बदे हों उसी के भाग
आँसू के दाने सिर्फ ।
सीचें वही खून जो लगाये वह सीने से,
और आँख भीच खायें वे कि जिन्हे जीने से,
उतरने में कीमखाब गड़ती हो .... । [2]

---

1. नए टेन्डर - सलिल गुप्त - पृ0 - 64
2. गेहूँ की सोच-प्रभाकर माचवे - तार सप्तक, सम्पादक - अज्ञेय, वक्तव्य - नेमिचन्द्र - पृ0 - 136

देश का उद्धार करने वाले ये नेता देश के राजतंत्र पर कितना गहरा प्रहार कर रहे हैं, जहाँ मुखौटा लगाये नेतागण दोहरे व्यक्तित्व को लाये हुए हैं।

बाहर अर्धनग्न - पीड़ा,
भीतर क्रीडा - लबरेज हरम,
करुणा के आँगन में, नेता
दे थोड़ी - सी भेज, शरम ।§1§

आज का युग वैज्ञानिक युग है, वर्तमान मानव जीवन यंत्रों पर निर्भर है, इसके साथ ही कमर तोड़ मंहगाई जिसमें सामान्य मनुष्य को जीवन जीने के साथ पेट भर के रोटी भी मिलना मुश्किल है । "वह एक" नामक कविता के द्वारा एक दैनिक अखबार बेचने वाले की विवशता को बड़ी सहजता के साथ प्रस्तुत किया गया है ।

वह एक
मैला सा कुर्त्ता पहने बेच रहा अखबार ।
× × × × × × ×
वह क्या समझता है, राजनीति ? खाक - धूल ।
उसे क्या पता है यह फैला कहाँ तक है ।
मैला जीवन - दुकूल ।
× × × ×
वह जानता है भाड़वार
तनखा साढ़े तीन कलदार । §2§

भारत वर्ष के दो चेहरे हैं, एक वह भारत है, जहाँ बड़े-बड़े पूँजीपति पनप रहे हैं, और दूसरा भारत वह है जहाँ लोग जिन्दगी जिने के लिए संघर्ष कर रहे हैं, पूँजी पति लोग वैभव शाली जीवन बिता रहे हैं । "निम्न-मध्यवर्ग" कविता का तथ्य इस बात की ओर संकेत कर रहा है । एक उद्धरण द्रष्टव्य है :-

सोन-तेल लकड़ी की फ्रिक में लगे धुन से,
मकड़ी के जाले से, कोल्हू के बैल से ।
मका नहीं रहने को, फिर भी ये धुन से
गंदे, अंधियारे और बदबू - भरे दड़बो में
जनते हैं बच्चे ।§3§

---

1. गेहूँ की सोच-प्रभाकर माचवे-तार सप्तक, सम्पादक-अज्ञेय, वक्तव्य-नेमिचन्द्र-पृ0-141
2. वही एक - प्रभाकर माचवे-तार सप्तक, सम्पादक-अज्ञेय-वक्तव्य-नेमिचन्द्र-पृ0 - 142-143
3. -वही- पृ0 - 144

आज के समाज में हृदयहीनता बढ़ गई है, सब कुछ विनिमय के धरातल पर व्यापारिक दृष्टि से देखा - जाँचा जा रहा है, देवताओं की मूर्तियों तक का चोर बाजार गर्म है । " कापालिक " कविता इसी युग - यथार्थ को वाणी दे रही है ।

यहाँ आज सब कुछ है बिकता
हृदय और ईमान देवता ।
सब ममता की यहाँ दिखावट
शून्य, खोखली और बनावट ।
सभी स्वार्थमय यहाँ बुलाहट,
किसने पायी सच्ची आहट ... । §1§

" कवि महेन्द्र भटनागर " देश की असंख्य जनता की भावनाओं के अनुरूप गाँधी - नेहरू के प्रति गहरी आस्था और श्रद्धा भावना संजोये हैं । राष्ट्रपिता महात्मागाँधी और राष्ट्रनायक नेहरू के प्रति आस्था-भाव निम्न पंक्तियों में अवलोकनीय है । एक उद्धरण देखें :-

गाँधी और नेहरू जैसों ने । जन्म नहीं लिया होता । तो -
हैवानियत के शिकंजे । हमारे हाथों - पावों मे । कसे होते ।
यहाँ वहाँ सभी जगह । मौत के सौदागर बसे होते । §2§

साठोत्तरी कविता में आज की व्यवस्था के प्रति आक्रोश के चेतना दृष्टि जितनी गहरी है, उतना कभी न था, किन्तु इसके साथ ही हिंसात्मक शक्तियों का जमकर विरोध भी हुआ है, किन्तु देश की वर्तमान - साम्प्रदायिकता की गहरी खाई को पाटना कोई मामूली कार्य नहीं है । इससे अनेक कवियों ने महसूस किया है । "भगवती लाल व्यास" ने हिंसा के बढ़ते हुए इस साम्राज्य के प्रति व्याकुल है ।

जाहिर है, कि खून जो बहा है -
वह मुझी में से बहा है
यह बात दूसरी है, कि
वह खून शायद मेरा नहीं है । §3§

राष्ट्रीय परावलम्बन पर नयी कविता के कवि को क्षोभ है वह देश को आत्मनिर्भर राष्ट्र के रूप में देखना चाहता है, वह भारत का नाम विश्व के उन

---

1. वह एक - प्रभाकर माचवे-तार सप्तक-सम्पादक-अज्ञेय -पृ0 - 157
2. संतरण - डॉ0 महेन्द्र भटनागर का रचना - संसार - सम्पादक-डॉ0 विनय मोहन शर्मा - सुधारानी - आमुख - पृ0 - 13
3. कविता नं.-7-सम्पादक- भागीरथी भार्गव - डॉ0 जय सिंह नीरज - पृ0- 30

प्रगतिशील देशों में देखना चाहता है, जो आज बड़ी-बड़ी शक्ति के रूप में सामने खड़े हैं । किन्तु राष्ट्र की बात तो दूर है हम अपने देश के बच्चों का लालन-पालन कैसे कर रहे हैं, कौन नहीं जानता, ललित शुक्ल का व्यंग्य देखिए :-

पराये मिल्क पाउडर का
शक्ति - संतुलन सम्हाल लूँ
देख लूँ -
" दि ग्रेट इन्डिया व्याकुल भारत नौटंकी कम्पनी
" कानपुर " का नाच । §1§

वस्तुतः साठोत्तरी हिन्दी कविता के कवि में भी हृदय की प्रधानता तो है, परन्तु उसका शब्द - शिल्प युग की बौद्धिकता का भी परिचायक है । क्या व्यक्ति और क्या, समाज, क्या राजनीति और क्या राष्ट्र, समूचे विश्व में सर्वत्र एक दूसरे के प्रति भयंकर विस्फोट, उफनता विद्रोह और दहकता षड्यंत्र सक्रिय है, स्वार्थ और संकीर्णता का बाजार गर्म है । एक उद्धरण द्रष्टव्य है :-

मेरे क्षणिक सुख-भोग का जायजा अब तुम्हे ही,
करना है, तुम्हे भी करना है, मुकाबला
षड्यंत्रों का । §2§

आर्थिक तंत्र की पीड़ा को "बैजनाथ गुप्त" ने भी महसूस किया है, वस्तुतः कवि तो वही है, जो युग-सत्य को मुखर करता है, जिसकी अनुभूतियाँ दर्द और कसक के गंगाजल से नहाकर शुद्धता ग्रहण करती हैं । "क्षुधा के आयाम" नामक कविता में "बैजनाथ गुप्त ने बीसवीं सदी के भारतीय इंसान का यथार्थ चित्रण किया है । निम्न पंक्तियाँ देखें :-

बीसवीं सदी के तीसरे चरण का,
मरियल श्वान - सा भूखा इंसान
असह्य उत्पीड़न
बकरे की धड़ - सी छटपटाहट - । §3§

साठोत्तरी हिन्दी कविता में मानवजाति के प्रति हो रहा शोषण के खिलाफ एक निर्भीक कदम कुछ कवियों ने उठाया है, इस देश में कुछ लोगों के बच्चे

---

1. साठोत्तरी कविता - सम्पादक - सलिल गुप्त - पृ० - 46
2. साठोत्तरी कविता - सलिल गुप्त - पृ० - 16
3. क्षुधा के आयाम - बैजनाथ गुप्त - पृ० - 27

जन्म के साथ ही बड़े बन जाते हैं, और कुछ जीवन भर बोझ ढोते हैं, एक वर्ग मनो वैज्ञानिक रूप से विद्रोह और बगावत कर रहा है, और वह देश की न्यायिक दृष्टि पर से ही विश्वास हटानें को बाध्य हो जाता है, आर्थिक संकट की पीड़ा को आज का पिता अपनी संतान की सुख-सुविधा को सामाजिक-निष्ठुरता के पाटों में चकनाचूर होते देखकर सोचने समझने की समस्त शक्तियाँ खोने लगता है, वस्तुत: कविता साठोत्तरी पीढ़ी के लिए जिन्दगी के सही - गलत सत्यों के रूप में मुखर हुई है ।

साठोत्तरी कविता का कवि कविता की मूल भूमि को तनावपूर्ण और विद्रोही स्थितियों में ही देख पाता है, आधुनिक समाज में शोषण अपनी चरम सीमा पर है, इसी शोषण की प्रवृत्ति और व्यभिचार को कुरूपता को "सुरेश सलिल" ने अपने ही ढ़ग से मुखर किया है, कवि को समाज का शोषक वर्ग भेड़िये और नाग से भी भयंकर लगता है । एक उद्धरण दृष्टव्य है :-

यह नर - भेड़िये हर नयी सम्भावना को अपने जबड़ों में,
कस लेते हैं, कभी नाग बन कर डस लेते हैं, या - या
आधी रात को अकेले छोड़ कर चले जाते हैं, दूसरों
की दया या माँ की वेश्यावृत्ति पर
(सम्भावना को) पालने के लिए । (1)

नयी कविता के परिवेश में व्यंग्य - प्रहारों के द्वारा देश की भटकती अस्मिता को प्रज्वलित करने का प्रयास किया है, विजेन्द्र की कविता "जल-गाँव" इसका प्रमाण है, एक उद्धरण देखिए ।

जहाँ एक जिन्दा इन्सान को जमीन से गाड़ दिया गया हो ।
जहाँ देश की जांघ में सूराख किया गया हो ।
काले - काले दाग ।
साजिश भरे चेहरे । खूनी इच्छाओं के पंजे । घुटने की
मुड़ी हड्डियाँ । या जहरीली घास का वन
वहाँ क्या - क्या उगेगा । (2)

राजनीति सम्बन्धी कविताओं के द्वारा "अक्षय उपाध्याय" ने शोषण को चुनौती दी है, "दो तरफा मोर्चा" नामक कविता का एक उद्धरण देखिए :-

---

1. साठोत्तरी कविता - सम्पादक - सलिल गुप्त - पृ0 - 14
2. कविता-7 सम्पादक- भगीरथ भार्गव - डॉ0 जयसिंह नीरज - पृ0 - 25

चुप्पी तो बड़ी खतरनाक है
दलालों की अपनी शिनाख्त है
इसलिए कहता हूँ
अपनी आत्मा में आग लगा लो
और यह मानकर चलो कि
भविष्य में तुम्हे इसी प्रकार स्वर्ग दिख सकता है । §1§

"छापामार" कविता के द्वारा "आग्नेय" ने वर्तमान राष्ट्रीय राजनीति की देश की अराजकता को, तथा स्वार्थी नेताओं के दृष्टिकोण पर व्यंग्य किया है, आज के नेता राष्ट्रीय हितों की बलि चढ़ाने में जरा भी संकोच नहीं करेंगे, इसलिए कवि ने उन्हे तथा जनता को सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक नीतियों को इस कविता के द्वारा बताया है, और उन्हे चेतावनी भी दी है, एक उदृरण दृष्टव्य है :-

एक आम आदमी, एक अदना आदमी
बार-बार एक पोस्टर चिपका रहा है
बार-बार एक पोस्टर फाड़ रहा है,
और चिल्ला-चिल्ला कर कह रहा है
सोच लो, सोच लो
एक बार फिर सोच लो, एक बार फिर सोच लो । §2§

साठोत्तरी कविता में राजनीतिक व्यंग्य आतंक की प्रवृत्ति और स्वार्थ प्रवृत्ति का बोलबाला है, साठोत्तरी कविता का उन्मेष काफी प्रभावपूर्ण है, युग की विसंगतियों और विडम्बनाओं के सन्दर्भ में "ललित शुक्ल" की कविताएँ जीवन का सही गणित बनी हैं, जहाँ प्रतिदिन के उलझे और कठिन प्रश्नों के हल सहज और सरल ढ़ंग से हल होते दिखाई देते हैं, कवि ने इस युग के प्रश्नों को हल करने की चेष्टा की है । "ऊँचाई दर्द की" कविता में स्वतन्त्र भारत की प्रगति पर एक तीखा व्यंग्य है, एक उदृरण दृष्टव्य है :-

चौकन्ने खरगोश की छलांग - सा
आजादी का हिरन कुछ लम्बा
कूद गया है
स्वार्थ ने ईमान की चादर
समेट ली है । §3§

---

1. कविता-7 सम्पादक- भगीरथ भार्गव-डॉ० जयसिंह नीरज-पृ०- 39
2. -वही- पृ० - 37
3. ऊँचाई दर्द की - ललित शुक्ल - पृ० - 38

आज भारत में ऐसी परिस्थितियों का निर्माण हमारे राजनैतिक नेताओं ने किया है, जिससे राष्ट्र को बहुत बड़ा खतरा पैदा हो गया है, देश में धर्म और जातिवाद के नाम पर कुछ लोग कमाई कर रहे हैं, देश के अन्दर धर्म और संस्कृति तथा परम्परा का घोर अपमान हो रहा है, हर राज्य में यह आग फैल रही है, जो एक दिन सारे राष्ट्र के टुकड़े-टुकड़े कर के ही छोड़ेगा । "जीवन शुक्ल" की कविता " एक फुटनोट" की निम्न पंक्तियाँ देखिए :-

अफीम- सा ईश्वर
पीनक की परम्परा - सा धर्म
वक्ष पर कसी कंचुकी - सी संस्कृति
मैं विरासत के नाम पर
रामनामी डाले हूँ ।
जातियों की जर्जर हो गयी दिवार को
सहारा दे रहा हूँ । ॥1॥

साठोत्तरी हिन्दी कविता में परिश्रम की भावना को अधिक महत्त्व दिया गया है, एक ओर देश में बेकारी भुखमरी और अज्ञान का ताण्डव है, तो दूसरी ओर धर्म के प्रति अंध भक्ति । फलतः देश के निवासी जीवन के कर्तव्य में निष्क्रिय हैं, उन्हे भूखे बैठकर हनुमान चालीसा पढ़ना तो ठीक नहीं लगता है, परन्तु उतने ही समय में आजीविका के लिए मेहनत प्रिय नहीं है, यह कैसी विडम्बना है।

धर्म और जाति के आधार पर भारत की राजनीति आज एक ऐसे मोड़ पर खड़ी है, जिससे राष्ट्र की अखन्डता को खतरा पैदा हो गया है, जनता का मोह नेताओं पर कम हो रहा है, जोड़-तोड़ की राजनीति दल बदलुओं की सरकारें नेताओं से लेकर मंत्री तक सरकारी दफ्तर में चपरासी से लेकर हर अधिकारी भ्रष्टाचार में लिप्त है, देश के सत्ताधीशों का नैतिक पतन हो गया है ।

आज की विश्व व्यापी जीवन - स्थितियों में राष्ट्र की अखन्डता की रक्षा और स्वतंत्रता की अमरता केवल धर्म के पारायण से सम्भव नहीं है, विश्व के सारे राष्ट्र जब कि अपने आपको अस्त्रों-शस्त्रों से सबल बनाने की होड़ में सक्रिय और व्यस्त हैं तब हमारे राष्ट्र की स्वतंत्रता मात्र धर्म, जातिवाद, प्रदेशवाद और अहिंसा की वाणी से ही कैसे सुरक्षित रह सकती है ।

---

1. "एक फुट नोट "-जीवन शुक्ल - साठोत्तरी कविता - सलिल गुप्त - पृ0 - 72

आज देश के कई भागों में कोमी दंगे हो रहे हैं, कुछ राजनीतिक पार्टियां ऐसे लोगों को मदद कर रही है, कुछ जिम्मेदार नेता भी शामिल है, चाहे वह किसी भी धर्म के हों, क्या उन्हे हिन्दुस्तान से निकाला जा सकता है, जिन राज्यों में हिंसा हो रही है, और निर्दोष लोगों की जानें जा रही है, वहाँ मात्र भारतीय नेताओं की साजिश है, और इसी तरह किसी भी राज्य से चाहे वह हिन्दू हो, या फिर चाहे मुसलमान हो, उनकी इस पलायन की नीति को रोका नहीं गया, तो आज भारत के जितने भी नेता हैं, या बुद्धिजीवी है, उन्हे इतिहास कभी माफ नहीं करेगा ।

धर्म अमर है, वह कभी मिट नहीं सकता, अगर हम इतिहास उठाकर देखें तो औरंगजेब जैसा आततायी जो हिन्दू धर्म को मिटानें पर तुला था, किन्तु वह भी सफल नहीं हुआ, इतना होते हुए भी हिन्दू धर्म दक्षिण में आलवर जातियों के माध्यम से पल्वित हो रहा था, मात्र सत्ता में बनने के लिए या वोट लेने के लिए धर्म को या जाति को हत्थकन्डा बनाया जा रहा है, मजहब के नाम पर जनता को गुमराह किया जा रहा है, वैसे देश के सामने बड़ी-बड़ी समस्यायें हैं, सबसे बड़ी समस्या गरीबी है, लोग भूखे मर रहे हैं, उन्हे दो वक्त की रोटी नसीब नहीं हो रही है - पहनने के लिए कपड़ा नहीं है, स्वच्छ जल की व्यवस्था नहीं है, गाँवों में शहरों में शौचालयों की व्यवस्था नहीं हो पायी है, फूटपाथ पर अनाथ बच्चे घूम रहे हैं, शिक्षा के क्षेत्र में बड़े पैमाने पर भ्रष्टाचार व्याप्त है, जो लोग अपने बच्चों को पढ़ाना चाहते हैं, उन्हें स्कूलों में प्रवेश नहीं मिल पाता, गन्दी बस्तियाँ दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है, उन्हे प्राथमिक सुविधा देने में हम नाकाब रहे हैं । साहित्य के क्षेत्र में चमचागीरी बढ़ रही है, आज का जीवन - परिवेश अभेद जीवन-स्थितियों से छटपटा रहा है, साठोत्तरी के सम्मुख अनेक चुनौतियाँ है, एक ओर उसे साहित्यिक क्षेत्र में जमने से पहले ही निर्जीव घोषित करने पर कृतसंकल्प हैं, और दूसरी तरफ परम्परावादी निर्जीव मान्यताओं के ढेर ने आधुनिकता बोध को नकारने का निश्चय कर रखा है, "गीत" या "गीतांजलि" जिन परिस्थितियों की उपज हैं, वे जीवन की सामान्य परिस्थितियों में भी आज के परिवेश में कहाँ उपलब्ध है । आज तो हर तरफ हर जगह, लूट-फाट, मारधाड़, शोषण, भ्रष्टाचार, और अराजकता फैली हुई है । "राजकमल" चौधरी ने आपनी कविता के माध्यम से इस परिस्थिति का वर्णन किया है ।

एक उद्धरण देखें :-

वेश्याओं के ऊँचे पलग हैं
या जली हुई लकड़ियाँ
कहीं जगह खाली नहीं हैं गज भर
जहाँ बैठकर लिखी जा सके गीता या गीतांजलि,
ऊँचे पलंग हैं
या रसोई घर की जली हुई लकड़ियाँ हैं । §1§

वर्तमान समाज व्यवस्था के घिनौने रूप पर "अंचल राजपूत" का व्यंग्य भी अवलोकनीय है, "अन्तर" कविता की निम्न पंक्तियाँ राष्ट्रीय पीड़ा की अभिव्यक्ति करती जान पड़ती है । एक उद्धरण देखिए ।

वोट के बदले में
खुले हाथों बाँटे गये
देश - द्रोह के परमिट की गन्दगी
- और -
सिसक रही दूर पड़ी
देश की रक्षा को
विधवाई जिन्दगी । §2§

साठोत्तरी हिन्दी काव्य में कहीं - कहीं उपदेशात्मकता परक स्वर भी यत्र तत्र उभरे हैं, इस प्रसंग में विधार्थी के नाम शिक्षक का खुला पत्र नामक कविता की निम्न पंक्तियाँ"डॉ० रमेश मिश्र" की दृष्टव्य है ।

थोड़ी - सी गफलत, सामने खड़े शत्रु को शह देगी
विपक्षी हंस देगा, राष्ट्र का अपमान करेगा,
क्रान्ति से पहले तन की चादर को फैला दो
बनने दो
जो गर्म देर में होती और "शीतल भी विलम्ब से ।
साराश यही है --
तुम्हारा भविष्य तुम्हारे सम्मुख है,
तुम परिवार, राष्ट्र मानवता के एकमात्र दीपक हो । §3§

मानवता मात्र शाब्दिक रह गयी है, "शब्दों के अर्थ" कविता में "केदार नाथ कोमल" ने आज की आचरण हीन पाशविक प्रवृत्ति पर अच्छा प्रहार किया है, निम्न पंक्तियाँ दृष्टव्य है ।

---

1. कविता-7 - सम्पादक-भगीरथ भार्गव -डॉ० जयसिंह नीरज"पृ०"- 19
2. क्षितिज की खोज - अंचल राजपूत - पृ० - 78
3. व्यक्ति और अभिव्यक्ति - डॉ० रमेश मिश्र - पृ० - 66

बापू । हम कितने अच्छे हैं
सत्य, अहिंसा, मानवता के पवित्र शब्द
मात्र दोहराते हैं
पर इन शब्दों के अर्थ
भूल जाते हैं । §1§

साठोत्तरी हिन्दी काव्य का पौराणिक सन्दर्भ :

इस काल में जिन कवियों ने पौराणिक सन्दर्भ को लेकर कुछ कविताओं की रचनाएँ की है, उनमें "वचन देव कुमार" का विशेष उल्लेख है, सन्- 1960 के बाद कविताओं में आस्था के स्वर की व्यंजना प्रस्तुत करते हुए "डॉ0 सुन्दर लाल कथूरिया" के विचार अवलोकनीय है - 1960 के बाद आस्था का यही स्वर " डॉ0 वचन देव " की अनेक कविताओं में भी दिखाई पड़ता है, मनुष्य की अदम्य जिजीविषा और मानव मूल्यों में आस्था का सतर्क स्वर उनकी अनेक कविताओं में उपलब्ध है, उनके काव्य संकलन " ओ अजन्मा सुनो " की संकल्प आस्था, मानव जिगनिषा तथा कवितायें " बे मौसम को " में संग्रहीत ध्रुव है, आराधना जैसी कवितायें इस सन्दर्भ में उल्लेखनीय हैं । §2§

" कवि वचन देव कुमार " ने बिम्बों के व्यवस्थित समीकरण के द्वारा प्रस्तुत करने में अद्भुत कौशल का परिचय दिया है, एक उद्धरण देखिए ।

टूटी तश्तरी - सा चाँद
अबरक के बूँद के - से तारे
कैंसर के रोगी की आँखों - से बुझे-बुझे बल्ब ।
कमरे कैदी - सा झांकता है प्रकाश
सब कुछ आज लगता है, बोझिल, बदशक्ल और उदास
रात अमावस की जब तुम होती नहीं हो पास ।
रात कभी दिखती थी दुल्हन नवेली - सी
पहनकर आयी थी, तारों के गजरे
और मांगटीका चंदा का ।
किन्तु आज की संध्या लगती है बेवा-सी
बेबस, वेपनाह और निराश । §3§

भारतीय परिवेश में व्याप्त विवशताओं के प्रति आक्रोशी भाव मुद्रा का उल्लेख वचन देव कुमार की निम्न पंक्तियों में व्यंजित हुआ है ।

---

1. चौराहे पर - केदारनाथ कोमल -पृ0 - 27
2. अब चीनूहा परिवेश - सुधा गुप्ता - पृ0 - 25
3. कविताएँ - बेमौसम की - डॉ0 वचन देव कुमार - पृ0 - ।

कितनी बार मैंने चाहा है,
तुमसे न बोलूँ
कितनी बार मैंने चाहा है,
तुम्हे न देखूँ
हाँ । कितनी बार चाहा है
तुम्हे न सुनूँ । §1§

पौराणिक संदर्भों और मिथकों के प्रयोग धर्मी यशस्वी कवि और वर्यस्वी समीक्षक "वचन देव कुमार " की प्रायः सन्- 1960 के पश्चात् प्रकाशित सभी काव्य - कृतियों में ईहामृग §1962§ " ओ अजन्मा सुनो" 1967 एवं "कविताएँ बेमौसम की" 1976 में भारत के गौरव शाली अतीत की पृष्ठभूमि के आधार पर राष्ट्रीय चेतना दृष्टि का परिचय उपलब्ध होता है, " ईहामृग " और "ओ अजन्मा सुनो" कृतियों के नाम ही राष्ट्रीय चेतना परक है, "एक लक्ष्य की पुकार" में कवि दृष्टि का राष्ट्रीय पक्ष उभारा है । एक उद्धरण देखें :-

नहीं मैं कोई कर्ण
जो तुम्हारे अर्जुन
हाँ, सव्यसाची धनुर्धर अर्जुन को
कर दूँ कीर्ति हीन । §2§

व्यंग्य और चेतना दृष्टि का एक उद्धरण देखिए :-

अपनी वज्र बाहुओं का कौशल काश ।
किन्तु दाहिने अँगूठे की गुरू दक्षिणा पर
थूकेगी
अनागत पीढ़ी
नहीं कर पायेगी क्षमा
ज्ञानार्थियों की टोली । §3§

भारतीय जीवन मूल्यों के प्रति अटूट श्रद्धा कवि की अनेक कविताओं में मुखरित है, इन कविताओं में अस्मिता बोध "अग्नि परीक्षा" "लैम्प पोस्ट" "नयी रामायण" "स्वागत" एवं "विहार केसरी" के आस्वाद-व्यंजना का सफल प्रयत्न हुआ है, वस्तुतः पौराणिक सन्दर्भों से जोड़ना भी राष्ट्रीय चेतना के उत्कर्ष

---

1. कविताएँ - बेमौसम की - डॉ0 वचन देव कुमार - पृ0 - ।
2. ईहामृग - डॉ0 वचन देव कुमार - पृ0 - 8
3. -वही- पृ0 - 8

का प्रतीक कहा जा सकता है । इस प्रसंग में कवि "वचन देव कुमार" की निम्न पंक्तियाँ "मार्कन्डेय पुराण" से जहाँ साम्य लिए हैं, वहाँ राष्ट्र भक्ति की पराकाष्ठा भी उल्लेखनीय है, एक उदाहरण देखिए :-

साष्टांग कर बैठी थी,
तुम्हारे समक्ष
ब्रह्मा विष्णु महेश
इन्द्र, वरुणादि देवों की समवेत शक्ति । §1§

"टाई" कविता की निम्न पंक्तियों में कवि वचन देव कुमार की आधुनिकता और आधुनिकता बोध से समन्वित किन्तु राष्ट्रीय दृष्टिकोण से तपी चेतना ने उत्कर्ष का अनुमान सहज में ही हो जाता है । एक उदरण देखिए :-

लटक रही अभी-अभी खूँटी पर
बनाकर लम्बा - सा फ्रांस
कह रही कुछ मंद - मंद स्वर में
यह उपालम्भ, उपहास सिर्फ मेरा बन्धु ...
विश्व - इतिहास के सफे साथी हैं इसके
हजरत मुम्हमद या ईसा की सूली की
याददाश्त हूँ मैं । §2§

कवि वचन देव कुमार ने अपनी कविताओं में सच्चाई को बहुत नजदीक से देखा है, और उसे महसूस भी किया है । "ओ अजन्मा सुनो" की प्रायः प्रत्येक कविता पुरावृत्त के प्रयोग से सशक्त बन पड़ी है । "याचना" संकल्प" "याद" "लोकापवाद" "बलो निष्कंपनिवति" "मिलन पर्व" "सूर्य - स्तुति" "पुत्रोत्सव" "बेशर्म औलाद दशकंधर की" "दगाबाज" "दुश्मन से" एवं "प्रेरणा सोत्र" आदि कवितायें राष्ट्रीय चेतना के पौराणिक - फलक की अत्यन्त सशक्त रचनाएँ हैं । भारतीय मनीषा की पौरुष धारा में जहाँ सत्य और विक्रम जैसे दिव्य बहुमूल्य रत्न दमकते हैं, वहाँ परहित जनित सेवा भाव की कीमत प्रत्येक युग में राष्ट्रीय स्वाभिमान की गौरव बृद्धि में सहायक रही है । कवि वचन देव कुमार की चेतना दृष्टि ऐसे उदार प्रसंगों में खूब रही है । " ओ अजन्मा सुनो " कविता - संग्रह की निम्न पंक्तियाँ इस सन्दर्भ में दृष्टव्य है ।

---

1. ईहामृग - डॉ0 वचन देव कुमार - पृ0 - 52
2. "टाई" - डॉ0 वचन देव कुमार - पृ0 - 28

सत्यशील की दृढ़ पताका
बल - विक्रम - दम परहित के वारन
वर विज्ञान के कठिन को दन्ड
वाले राम की .....। §1§

" कविताएँ बेमौसम की" कविता-संग्रह की प्राय: प्रत्येक कविता में अत्याधुनिक तेवर और अर्वाचीन भाव - स्वर मुखर हैं । "सौभाग्य" "मौन" "प्रेम" "विश्राम" "वियोग" "परिवर्तन" "सहानुभूति" "ओ मे रे बापू" "चंदा के देश में" "ध्रुव" "अ-वंदन" और "आराधना" आदि कविताओं में युग बोध की भाव मुद्राओं का सशक्त उल्लेख मिलता है, वस्तुत: कवि वचन देव कुमार ने आधुनिक युग की विकृतियों और विरूपताओं तथा समस्याओं और अपेक्षाओं को पौराणिक प्रसंगों में आकृतिमान करके सहज सम्प्रेषण के लिए नयी जमीन तोड़ी है । शोषितों की विवशता आकुलता और छटपटाहट के सन्दर्भ में डॉ0 वचन देव कुमार की निम्न पंक्तियों में यथार्थ का मर्मस्पर्शी स्वर मिलता है । एक उद्धरण द्रष्टव्य है :-

तुम मेरी बात पूछते हो सखे ।
मक्खन - मलाई की कौन कहे
नसीब नहीं दोनों जून चुटकी भर नमक मिला मकई का सत्तू भी ।
परती अब गाँवों जमीन कहाँ
जहाँ से नोच लाऊँ
मुफ्त मुट्ठी भर जलावन भी । §2§

व्यंग्य और विद्रूप के द्वारा समाज में व्याप्त विकृतियों को नयी - कविता की प्रहारक दृष्टि ने निश्चय ही बेनकाब किया है, व्यंग्यात्मक दृष्टि की कलाबाजी के द्वारा कवि वचन देव कुमार की मानसिकता के गहरे कुहासे की अनेक पर्तों को एक साथ उघाड़ा है, उनकी निम्न काव्य पंक्तियों में मानसिकता का एक नया रूप दिखाई देता है । एक उदाहरण देखें :-

मत चलाओ साक्षरता - आन्दोलन इस बुद्धिमान देश में
यहाँ का शिक्षित अँगूठे का नहीं
अँगुलियों के निशान का उपयोग सीख रहा है ।
चिन्ता मत करो मतदान की आयु सीमा खिसकाने की
यहाँ का बच्चा मतदान का अभ्यास कर रहा है । " §3§

---

1. "ओ अजन्मा सुनो" - डॉ0 वचन देव कुमार - पृ0 - 53
2. -वही- पृ0 - 54
3. कविताएँ बेमौसम की - डॉ0 वचन देव कुमार - पृ0 - 69

वर्तमान समय में जब हम काव्य के साथ साम सामयिक घटनाओं को देखें तो स्वाभाविक है, कि इस समय में काफी परिवर्तन कविता के क्षेत्र में आया है, इसके अनेक कारण हैं, देश की गरीबी विवशता, बेकारी की दशा ने सारे राष्ट्र को, समाज को क्षत - विक्षत कर दिया है, मान मर्यादा चरित्र और नैतिकता न्याय और सच्चाई का दम घुटा जा रहा है, सैक्स चालबाजी, फरेब, का बोल-बाला है, ऐसी परिस्थिति में काव्य के क्षेत्र में और कवियों तथा लेखकों के सामने एक कठोर साधना है, एक महान यज्ञ है, एक कठोर तपस्या है, "डॉ0 जोशी " ने इस यथार्थ को अपनी कविता - "अखबारी खबरें" में व्यक्त किया है, एक उदृरण दृष्टव्य है :-

भूखी माँ ने
दुध मुँहा बेटा मार कर
उसके भुने माँस से भूख मिटाई
बूढ़े बाप ने जवान बेटी बेंचकर
जान लेवा कर्ज चुकाया
नौकरी न मिलने से निराश
नौजवान ने रेल से कटकर आत्महत्या की । §1§

क्रांति चाहे किसी क्षेत्र में हो, वह सारे परिवेश को बदलकर रख देती है, अच्छे उद्देश्य के लिए क्रान्ति वरदान है, जब कि बुरे उद्देश्य के लिए अभिशाप । "कवि जोशी" ने अपनी कविता - "बड़ी आग" द्वारा यह भाव व्यक्त किया है। एक उदृरण देखें :-

दुर्व्यवस्था के विरूद्ध, विद्रोह की छोटी-छोटी आगों से
कुछ दुकानें जलती हैं, बसें जलती हैं,
गोलियाँ चलती है, हिंसा होती है
गरीब मरते हैं - इत्यलम् ।
विद्रोह की बड़ी आग फूँक देती है
जुल्मों का बड़े से बड़ा साम्राज्यवाद । §2§

आज सारे देश में मंहगाई अपनी चरम सीमा पर है, मामूली वर्ग के लिए जीना दुर्लभ है, परिवार का किस तरह से संचालन हो, एक विकट समस्या है, लोग आधी रात से ही राशन-पानी की चिन्ता में बड़ी-बड़ी लाइनें लगा कर

---

1. डूबता सूरज उगता सूरज - जीवन प्रकाश जोशी - पृ0 - 14
2. -वही- पृ0 - 16-17

दो घन्टे खड़े रहते हैं, और इसके अलावा जब नम्बर ना लगा तो मुँह लटका कर लौटना पड़ता है, इस नग्न सत्य को कवि जोशी ने अपनी कविता "अविचारित बोध-बिम्ब और मैं" में व्यक्त किया है, जिसका एक उद्धरण देखें :-

राशन, रोजमर्रा की जरूरत का सभी सामान
बाजार से गायब करा दिया है
जगह-जगह हनुमान की पूँछ जैसी
लम्बी-लम्बी लाइनें लगवाकर
मंहगाई के मारे मजबूर, मजलूम
हर बिचारे व्यक्ति को जिन्दा बुत बनाकर
"क्यू" में खड़ा कर दिया है । §1§

आज भारत देश का ऐसा कोई राज्य बाकी नहीं है, जहाँ पर कभी गणेशोत्सव पर तो कभी ईद के अवसर पर पुलिस गोली काण्ड की दुर्धटनाएँ, रेडियो, टेलीविजन के माध्यम से सुनने में आता है, कहीं किसी ने बेटा खोया, कहीं किसी ने बाप खोया ऐसे अप्रिय प्रसंगों को समाप्त करने का प्रयास किया जाना चाहिए, ऐसे एक भाव को "कवि जोशी" ने प्रस्तुत किया है, एक उद्धरण दृष्टव्य है :-

अरे, आदमीयत के असूलों से ऊँचा
कहीं नहीं है, कोई
ईश्वरः गाडः अल्लाहः रसूल-रहनुमा
आओ, आदमीयत के उसूलों को
आम आदमी पर अजमाएँ । §2§

प्रस्तुत कविता में "ईश्वर" गाड, अल्लाह, में मनुष्यता को महान बताकर उसकी गरिमा को बनाये रखने की हिमायत की गई है । आजादी के विगत तीन दशकों में देश में सबसे ज्यादा मुनाफाखोरी, जमाखोरी और शोषण वृत्ति खूब पनपी है, क्यों कि इनकी साँठ गाँठ राजनैतिक नेताओं से है, कवि जोशी" ने नयी पीढ़ी के नवयुवको इनसे टक्कर लेने के लिए ललकारते हैं । उक्त पंक्तियाँ देखिए :-

अरे, जला डालो जुल्मों के नगर-महानगर
जला डालो, राख कर दो उन्हे
जो पिछले कई वर्षों से जनता-जनार्दन के
सूखते जाते जिस्म की हड्डियों में
मुनाफ्रिकों जैसे काले कारनामों के बारूदी भन्डार भरे हुए
आयात-निर्यात का सरकारी लायसेंस लिये फिरते हैं । §3§

---

1. डूबता सूरज उगता सूरज - जीवन प्रकाश जोशी - पृ0 - 18
2. -वही- पृ0 - 21
3. -वही- पृ0 - 26

वर्तमान समय में भारतीय राजनीति के क्षेत्र में जो प्रचार चल रहा है, यह बड़े ही शर्म और लज्जा की बात है, आज का नेतृत्व देश की प्रगति और विकास के प्रति कम और अपने स्वार्थों को भुनानें में अधिक सक्रिय है, आज के चुनाव में ऐसे ही पथभ्रष्ट, मक्कार, और निकम्में लोगों को हर पार्टी ने टिकट दिया है, जो जनता का वोट लेकर पाँच साल तक शोषण करने के लिए विजय तिलक से सम्मानित होते रहे हैं, "कवि जोशी" ने अपनी " आधुनिक बोध एक विजन" में यह विचार व्यक्त किया है, निम्न पंक्तियाँ द्रष्टव्य है :-

राजनीतिक हत्या की सहानुभूति में
एक बवंडर उठेगा
जो काश्मीर से कन्याकुमारी तक
बेशुमार, बेगुनाह लोगों की लाशें
सत्ता - महत्ता - महत्वाकांक्षा के सामाजिक भूखे भेड़ियों के,
भक्षण के लिए, बाकायदा भेंट करता जायेगा
और इन्ही मुटियाए, मक्कार सामाजिक भेड़ियों को,
बुद्धि की जगह ऊन - चर्बी भरी भेड़ों की भीड़ जैसी
जाहिल जनता, आगामी चुनाव में
अपनी जहालत का प्रामाणिक वोट देकर
अपना नेता चुन लेगी । §1§

नयी कविता में मिथकीय प्रयोगों से भी राष्ट्रीय चेतना का स्वर मुखर हुआ है, महाकवि वाल्मीकि के सन्दर्भ में एक क्रौंच तो क्या आज हजार-हजार क्रौंच तमसा के कछार पर बालुई मिट्टी में मुंह मारते हुए छटपटा रहे हैं, आज देश का शोषक बहेलिया पारिवारिक वक्षों के कोटरों में हाथ डालता हुआ हँसते मुस्कराते दुधमुँहे बच्चों की ग्रीवा बेदर्दी और बेरहमी से अट्टहास के साथ मरोड़ता फिरता है, प्राचीन मिथकीय प्रयोगों के द्वारा नयी कविता के कवि ने आज की भीषणकारी युग परिस्थिति का जायजा प्रस्तुत किया है, एक उदाहरण देखें :-

सड़े गले कम्बल लपेट कर
दाँत किट किटाते हुए राम
अपने ही देश में निर्वासित राम
किसी लैम्पोस्ट के नीचे खड़े होकर
जाड़े की रात बिताते हैं ।

---

1. आधुनिक बोध एक विजन - कवि जीवन प्रकाश जोशी - पृ0- §16§44

बेचारी सीता बहुत ठगी गई है
भोर के हल्के धुँधलके में
संकरी पगडन्डी के सहारे
अपने लव - कुश छोड़कर
कहीं मजूरी ढूँढ़ने चली गई है
और मन्थरा
साकेत की महिषी बन बैठी है । [1]

वर्तमान समय में बाहरी दिखावा, बनावटीपन की गहरी पर्तों में राष्ट्र की छवि धूमिल हो रही है, अपनी वाहवाही के लिए ढ़ोंग और आडम्बर पर देश का असंख्य द्रव्य पानी की तरह बहाया जा रहा है, जिस देश में लोगों को दो वक्त की रोटी पेट भर नहीं मिल रही है, ऐसे राष्ट्र में खोखली राष्ट्रीय शान का प्रदर्शन अपने आप में एक विडम्बना है "कवि अभय की कविता " बीमार चेहरों के तेवर " का एक उद्धरण देखें :-

हटो, हटो क्या करते हो ?
रिसते हुए घाव
पूँछी हुई माँगें
सड़ी - गली देह
खाली कनस्तर
और फटे हुए राशनकार्ड लेकर
राजपथ पर खड़े होते हो,
यह जनतंत्र की शोभायात्रा है
कोई क्या कहेगा । [2]

साठोत्तरी हिन्दी कविता के कवियों ने आने वाली सामयिक हवा को जाना समझा है, कई मुखौटों को दुनियाँ को पहचानने की कोशिश कई कवियों ने अपनी कविताओं में किया है, आज का समुदाय कई वर्गों में तथा आज की जिन्दगी खन्ड-खन्ड होकर बिखर रही है, इस स्वार्थी और कपटी समय में हर कोई दूसरे को ठगनें का प्रयास कर रहा है, इसी भावना को "कवि प्रेम शंकर" ने युग-सत्य की अभिव्यक्ति को अपनी कविता - "व्यक्ति" में व्यक्त किया है, इसका एक उद्धरण देखिए :-

---

1. एक चेहरा पच्चीस दरारें - डॉ० मनोहर अभय - पृ० - 42
2. बीमार चेहरों के तेवर- डॉ० मनोहर अभय - पृ० - 63

व्यक्ति ने छल, फरेब और स्वार्थ का
एक चिकना खूब सूरत चेहरा उधार ले लिया है
बीसवीं सदी की शुरूआत ही ऐसी हुई
व्यक्ति - व्यक्ति नहीं रहा
समुदायों में खड़ा वर्गों में खड़ा
और सम्बन्धों से जुड़ा
व्यक्ति स्वार्थ का - चेहरा लगाये
खलिहान का चूहा बन गया । §1§

हमारे देश के नेता जब वोट लेकर संसद और विधान सभा में पहुँच जाते हैं, तब वे अपने निर्वाचन क्षेत्र को भी भूल जाते हैं, और चुनाव के समय में बार-बार जनता के सामने हाथ जोड़ कर दस्तक देते हैं, किन्तु आज का विशिष्ट मतदाता उनके इस रहस्य को भाँति-भाँति जानता है । "मरा हुआ आदमी" नामक कविता में "कवि प्रेम शंकर" ने इस वस्तु स्थिति का उल्लेख किया है, इसका एक उद्धरण देखिए :-

मैं आस्था का दूध पिलाकर पालता रहा
पर संशय के नाग को -
तुम्हे जीवित समझ, मैं अपने आपको जीवित समझता रहा
तुम्हे बार-बार चेताता रहा
मैं मृगतृष्णा में जीता
वर्षों में प्रेत बना अपने आपको सजीव समझता रहा
मेरा अहं उसी दिवस भस्म हो गया था
जब तुमने मेरे अहं को ललाड़ा था । §2§

आज नारेबाजी का बाजार गर्म है, गरीबी मुखमरी नारों से नहीं मिट, सकती, नयी कविता के आठवें दशक का कवि इस सच्चाई को अच्छी तरह से जानता है, कवि संतोषी की उक्त पंक्तियाँ द्रष्टव्य है :-

भूख ने
नपुंसक पीढ़ी
क्या कर लेगी ?
अपनी नंगई
टँकने के लिए / नारे लगा लेगी ....§3§

---

1. "कवि अनुपस्थित है" सम्पादक - डॉ० परेश - पृ० - 9
2. मरा हुआ आदमी - कवि प्रेमशंकर - पृ० - 13
3. टेढ़ी मेढ़ी सीढ़ियाँ - कवि संतोषी - सम्पादक- डॉ० सुन्दर लाल कथूरिया- पृ०- 29

इसी तरह " डॉ0 देवव्रत जोशी " को भी वर्तमान सदी पर क्षोभ है, जहाँ हर कोई हत्यारा है, किसी न किसी अर्थ में, कवि ने अपने जन्म दिवस पर " एक लानत " नामक कविता के द्वारा वर्तमान समय की विभिषिका को व्यक्त करता है, उक्त पंक्तियाँ देखिए :-

मैं इस सदी को लानत भेजता हूँ
जहाँ हर जेब में बारूद है
हर चेहरे पर नकाब । §1§

छायावादी कविता तक राजनीति का मुख्य अर्थ राष्ट्रीयता रहा है, परन्तु नये साहित्य सन्दर्भ ने काव्य को राष्ट्रीयता से अपर उठने के लिए मानों विवश कर दिया, शीत युद्धों, शान्ति भंग करने वाले प्रतिक्रियावादियों और दुराग्राही राजनीतिकों का गहरा विरोध नयी कविता में देखा जा सकता है ।§2§

साठोत्तरी कविता के दौर में भी "मुक्तिबोध" जैसे कवियों ने अपनी कविताओं में राजनीतिक चेतना की अभिव्यक्ति की । साठोत्तरी कविता का प्रमुख नारा रहा है, व्यवस्था का विरोध, यह विरोध सही ढ़ंग से किया जा रहा हो, या गलत ढ़ंग से लेकिन इसमें कोई शक नहीं कि यह विरोध राजनीतिक है, साठोत्तरी कविता में राजनीतिक सन्दर्भों, प्रश्नों और घटनाओं का अच्छा -खासा जलूस मिश्रित है, वैसे इन विवादों को साठोत्तरी कवियों ने समाप्त कर दिया है । आज का कवि राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में गहरी दिलचस्पी ले रहा है, और स्वयं को एक राजनीतिक नेता के रूप में पेश कर रहा है, यही कारण है, "डॉ0 भरत भूषण अग्रवाल" ने आज की युवा कविता को एक राजनीतिक व्यक्ति की कविता कहकर सम्बोधित किया है । युवा"कवि ऋतु राज" भी किसी अच्छे समकालीन हिन्दी कवि की कविता को अनिवार्य रूप से एक राजनीतिक व्यक्ति की कविता मानने के पक्ष में है । §3§

रघुवीर सहाय और श्रीकान्त वर्मा जैसे :- कवियों ने राजनीतिक कविताएँ लिखी हैं, किन्तु रघुवीर सहाय ने भारतीय राजनीति को विकृत रूप में हमारे सामने रखा है, "आत्म हत्या के विरूद्ध" में उन्होंने अपने आपको और " बेकार " शीर्षक कविता में वह सामान्य भारतीय नागरिक को पूरी तरह से व्यर्थ बतलाते

---

1. "एक लानत" - डॉ0 देवव्रत जोशी-सम्पादक-डॉ0 सुन्दरलाल कथूरिया-पृ0-38
2. दस्तावेज - जुलाई- 1979, पृ0 - 54-55
3. आवेग - 9, 1972 - पृ0 - 25

हुए उसका मजाक करते हैं । एक उद्धरण द्रष्टव्य है :-

देश की व्यवस्था का विराट वैभव
व्याप्त है चारों ओर
एक कोने में दुबक ही तो सकता हूँ
सब लोग जो कुछ रचाते हैं उस में
केवल अपना मत नहीं दे ही तो सकता हूँ
वह मैं करता हूँ
किसी से नहीं डरता हूँ
अपने आप और बेकार । §1§

इसी संग्रह की अंतिम कविता में देश के सभी राजनीतिक दलों को एक ही पलड़े में रखते हुए वह लिखते हैं :-

टूटते - टूटते
जिस जगह आकर विश्वास हो जायेगा कि
बीस साल धोखा दिया गया
वहीं मुझे फिर कहा जायेगा, विश्वास करने को
पूछेगा संसद में भोला - भाला मंत्री
मामला बताओ हम कारवाई करेंगे
हाय - हाय करता हुआ हाँ-हाँ करता हुआ हे-हे करता हुआ
दल का दल
पाप छिपा रखने के लिए एकजुट होगा
जितना बड़ा दल होगा उतना ही खायेगा देश को । §2§

" रघुवीर सहाय " की कविताओं को पढ़कर लगता है, कि आधुनिक हिन्दी कविता यहाँ जैसे पहलीबार संसद में प्रवेश करती है, विरोध के द्वार से । पर फिर भी ये कविताएँ किसी संकुचित अर्थ में राजनीतिक या राजनीति की कविताएँ हैं ही नहीं, वे किसी राजनीतिक घोषणा पत्र कार्यक्रम या सिद्धान्त का बखान अथवा प्रचार नहीं करती, किसी विशेष दृष्टिकोण की पक्षधरता पर जोर नहीं देती, वे तो उस परिवेश से एक नये प्रकार के तनाव की अभिव्यक्ति हैं जो आज इतना सर्वव्यापी रूप में राजनीति के अधीन हो गया है । वे एक जागरूक और संवेदनशील व्यक्ति द्वारा अपने चारों ओर के ठोस यथार्थ जगत के एक स्तर या एक से अधिक स्तर को परिभाषित करने के प्रयास की कवितायें हैं । §3§

---

1. आत्म हत्या के विरुद्ध - रघुवीर सहाय - पृ0 - 15
2. -वही- पृ0 - 90
3. आधुनिक हिन्दी कविता -संपादक - जगदीश चतुर्वेदी-पृ0 - 104

साठोत्तरी कविता वास्तव में जनतंत्र की कविता है, जिसमें आम आदमी के सुख-दुख को ही नहीं, बल्कि आदमी की नैतिकता के प्रति भी सीधा सम्पर्क बनाये हुए हैं, "धूमिल के "संसद से सड़क तक" तथा "जगूड़ी" के "नाटक जारी है", इन कविता संग्रहों के माध्यम से साठोत्तरी कवियों ने पहली बार अपनी कविता में एक ऐसी जमीन को उजागर किया है, एक उद्धरण दृष्टव्य है :-

झोलों से फाइलों तक सड़क है । शहर है
कुर्सियों पर मरने के लिए
गाँव हैं । फसलों पर रोते हुए
दो बैल हैं
तरक्की पर आदमी के साथ जोते हुए । §।§

साठोत्तरी सन्दर्भ और मिथक :

कवि को युग दृष्टा कहा गया है, यदि युगीन परिवेश में कवि अपने आपको जोड़ नहीं पाता तो उसके कवि धर्म की सार्थकता सिद्ध नहीं हो पाती, आज की कविता राजदरबारों के आश्रय की मुखापेक्षी नहीं है, और न ही वह मात्र मनोरंजन का एक विलासी साधन है, आज की कविता मनुष्य के जीवन संघर्ष का जीवन्त दस्तावेज है, और यदि आज का कवि इस दायित्व बोध से जुड़ता नहीं है, तो उसकी कविता - अप्रासांगिक होकर अपने सही अर्थों से भ्रष्ट हो जाती है यही कारण है कि अधिकांश युगीन कवियों ने सामयिक सन्दर्भों को अपने काव्य में अनेक कोणों से स्पर्श करने का प्रत्यन्न किया है ।

अपने कथ्य को काव्य कला की विशिष्टता प्रदान करने के लिए तथा एक बौद्धिक लालित्य समर्पित करने के लिए जब अलंकार, रस, बिम्ब, प्रतीक, आदि की सन्निहिती को स्वीकार किया जाता है, तब इन सब में समर्थ सन्निहिती मिथक की ही है ।

मिथक के संयोग और समन्वय से जहाँ कविता में अभिधार्थी प्रत्यक्षीकरण की सपाटबयानी दूर होती है, और कविता एक उत्कृष्ट मिथक के संयोग और समन्वय से जहाँ कविता में अभिधार्थी प्रत्यक्षीकरण की सपाटबयानी दूर होती है, और कविता एक उत्कृष्ट भूमि पर अवस्थित होती है, वही उसके कथ्य में कला का

---

1. नाटक जारी है - लीलाधर जगूड़ी - पृ0 - 44

सहचर भी उसे एक विशिष्ट मूल्य प्रदान करता है, और यही विशिष्टता कविता को गद्य से अलग रखने की एक सीमा रेखा है ।

जिन आधुनिक कवियों ने अपनी कविता में पौराणिक सन्दर्भों को प्रातांगिक परिवेश से जोड़ने का यत्न किया है, उन्होंने अपने अधिगृहित मिथकीय पात्रों को देश काल परिस्थितियों से संलग्न रखते हुए उनकी वैचारिक मेधा तथा प्रस्तुती को अपने अभीष्ट सन्दर्भों से संयुक्त कर दिया है, और यह समन्वय ही आज के . ' कवि की कला चेता दृष्टि का प्रतीक है ।

भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र "अंधेर नगरी" में नाटक के माध्यम से जिस अपरोक्ष कथ्य को प्रत्यक्ष परिवेश से जोड़ कर कहने के पक्षधर दिखाई देते हैं, उसी कथ्य विशेष को "धर्मवीर भारती" ने अपने "अन्धा युग" "गीति नाटिका" में प्रस्तुत करते हैं, केवल सिर्फ इतना ही है, कि भारतेन्दु बाबू पात्रों के रूप में कल्पना का सहचर्य ग्रहण करते हैं, तो धर्मवीर भारती सन्दर्भित पौराणिक पात्रों का आश्रय ग्रहण करते सा जान पड़ते हैं । अन्धायुग में "गान्धारी" एक आरोपित अन्धत्व को वाहन करती हुई असह्य परिवेश को जीने की वाहयता से गुजरती है, तो वह कवि के सामने एक बनी बनाई सम्पूर्ण साजो-सज्जा के साथ भूमिका को प्रस्तुत कर देती है, जिस पर वह आधुनिक युग की प्रदूषित राजनीति को काव्यांकित कर देता है, इस प्रकार मिथक कविता के लिए एक 'स्ट्रक्चर' ढांचा तैयार करके देता है जिसे कवि अपने मानसिक उद्वेग और समर्थ चिन्तन से साज-सज्जा प्रदान करके एक विशाल अथवा भव्य आटालिका के रूप में प्रस्तुत कर देता है, इस तरह आधुनिक कविता के लिए मिथक ने जहाँ एक कथ्य या साहुलियत प्रदान की है, वहाँ कथ्य की संवेदनाओं के लिए उसके अनुकूल उन पात्रों को भी प्रस्तुत किया है, जो पाठक या श्रोता के हृदय में पहले से ही किसी न किसी रूप में अंकित रह चुके हैं, इस तरह श्रोता या पाठक के लिए एक बनी बनाई समझ तैयार रहती है, जिसे कवि अपने अर्थों में परोस देता है ।

" संशय की एक रात " कवि के मानसिक उद्वेग की समर्थ काव्य प्रस्तुती है, जिसमें आधुनिक राजनीति के प्रवंचित एवं अनिर्णित गन्तव्यों को निर्देशित किया गया है ।

आधुनिक अनेक कवियों ने अपने-अपने सामर्थ के अनुसार मिथक पात्रों को अपने आप में जिया है, उसके लिए वर्तमान में ही एक जमीन दी है, और फिर अपनी कविता में उसे वैचारिकता के अनुसार विविध रंग रूपों में प्रस्तुत भी किया है । एक उद्धरण देखिए :-

" साम्राज्यवृत्ति के द्वारा / हम साधारण जन /
अर्थ सम्भव कर दिए गए / हमने राक्षस रथ खैंचे /
दास भाव से / बदले में / नर नहीं /
वानर पद प्राप्त किए / लंका में हम / भोज्य पदार्थों से बिकते हैं /
गरम सलाखों से / प्रत्येक पृथज्जन देह लिखी है /
ये गुलाम हैं / इनका केवल यही नाम है । (1)

" किशोर काबरा " ने "उत्तर महाभारत" में द्रौपदी की अन्तस्थ व्यथाओं को विविध रूपों में उजागर किया है, तो एक - एक नारी की सास्वत पीड़ा वह जीवन्त अभिव्यक्ति सी लगती है, किशोर काबरा " कहते हैं :-

हाँ
द्रौपदी ।
धूम्र रेखा - सी ।
ठिठकती काँपती सी गिर पड़ी है ।
लड़खड़ाती - सी
सिसकती हाँफती - सी
द्रौपदी ।
हिम शिखर पर रह गई है, द्रौपदी ।
हिमनदी - सी वह गई है द्रौपदी ।
विरल सांसों का तरल संसार,
जैसे थम गया है ।
धमनियों में
रक्त का संचार जैसे जम गया है ।
हाथ कुछ ऊँचे किए ।
मानों किया अन्तिम प्रणाम ।
यूँ जैसे उठ गये थे हाथ,
पर वे हाथ हिल पाये नहीं,
बोलना चाहा,
तो थोड़ा मुँह खुला,
पर,
स्वर निकल पाये नहीं,

---

1. संशय की एक रात - नरेश महेता - पृ0 - 65

धूम रेखा बन गयी है, स्वेत चंदन
स्वेत ही सैया, चिता और स्वेत क्रंदन
हिम नदी के पत्र पर
इतिहास का लिखा यह अनलिखा क्षण,
मौन चादर में सिमट कर रह गया ः §1§

इसी संदर्भ में "डॉ0 विष्णु विराट" की लम्बी कविता "एक रण-वैचारिकी है शेष" भी विशेष उल्लेखनीय है, जिसमें कर्ण की मानसिक व्यथा को आधुनिक अधिकारों की जिजिविषा में जकड़े राजनायकों के प्रदूषित आचरणों को रेखांकित किया गया है, एक प्रसंग में कर्ण कुन्ती से कहता है :-

" और तुम जो बो रही हो, इस धरा पर / ये अनीति बीज /
ये व्यवचार के क्षण / स्वार्थ का यह संविधानी चक्र /
यह कालुष्य लिप्सा / आचरण की भ्रष्ट सृष्टि का /
हलाहल / और यह षड्यन्त्र का दुर्व्यूह । §2§

कुन्ती,
कल - तलक / ये संसृती में
हरा होकर उगेगा,
आचरण मर्यादा तोड़ेगा तुम्हारा नाम,
तुम इतिहास को इतना चबाओ मत / कि कल का नया सूरज
दृष्टि ही खो दे, / तुम्हारी इस कृपा से / §3§

युद्ध की विभिषिका और उसके दुष्परिणामों के प्रति संकेत करते हुए कवि कहता है :-

" यह महा भारत स्वयं अभिशाप है
धृतराष्ट्र के अन्धत्व के काली नशा का,
यह अमंगल है, अनीति के चलन का
यह वही व्यभिचार गाथा,है, पुरानी,
रोक दो यह यज्ञ
जिसमें होम होते वीर ....
एव धृत काष्ठ जैसे
रोक दो यह यज्ञ
अपने राष्ट्र का पौरूष जिसमें भस्म होता,

---

1. उत्तर महा भारत - किशोर काबरा - पृ0 - 45 -अभिव्यक्ति प्रकाशन - नई दिल्ली ।
2. एक रण वैचारिकी है शेष - डॉ0 विष्णु विराट - पृ0 - 20
3. -वही - पृ0 - 21

रोक दो दुनीति की संयोजना यह,
यह अनीति की प्रतिष्ठा का प्रवंचन । §1§

डॉ0 विष्णु विराट ने कर्ण की इस अनिर्वित अवस्था को आधुनिक राजनीति के अव्यवस्थित तंत्र से जोड़ने का प्रयत्न किया है, इसी प्रकार उनकी प्रबन्ध काव्य रचना "निर्वसना" में भी जब द्रौपदी अपने परिवार के षड्यन्त्रों को उद्घाटित करती है, तब लगता है, कि जैसे वह वर्तमान युग के प्रदूषित भ्रष्टाचार को व्यक्त कर रही है ।

इस प्रकार हम देखते हैं, कि मिथक के द्वारा आधुनिक कविता को एक नई बनी बनाई और व्यवस्थित जमीन मिली है, जिस पर उन्होंने अपने सार्थक वैचारिक काव्य क्षणों को अनेक रंगों में प्रस्तुत किया है, कविता में मिथक का प्रयोग कविता की सांकेतिक एवं लाक्षणिक शैली को जहाँ बल प्रदान करता है वहाँ अपरोक्ष कथ्य की कलात्मकता से भी उसे अलंकृत करता है ।

पौराणिक पात्र जब नयी साज-सज्जा एवं नये वैचारिक परिवेश में कविता के माध्यम से हमारे सामने प्रस्तुत होते हैं, तो उनके इस नये काव्यात्मक रूप से हम एका-एक संलग्न हो जाते हैं, और यही कारण है, कि मिथकीय कविताओं के प्रति काव्य रसिकों के मन में अपेक्षाकृत अधिक मोह होता है, मिथक ने आधुनिक कविता को एक नयी सार्थक एवं सबल दिशा प्रदान की है ।

20वीं शताब्दी में मिथक के माध्यम से आधुनिक सन्दर्भों को काफी हद तक व्यक्त किया गया है, मिथक आज के यथार्थ को और आज का यथार्थ मिथक को परिभाषित करने के लिए एक दूसरे के अस्तित्व में एकाग्र हो गये हैं, सबसे महत्वपूर्ण बात यह है, कि इस रचना में मिथक के बुनियादी आशय और आधुनिक मनःस्थितियों के बीच एक द्वन्द्वात्मक रिश्ता निरन्तर बना रहता है, और शब्दों प्रतीकों तथा बिम्बों के माध्यम से नये संदर्भ को उद्भूत करते हैं, आधुनिक मनुष्य के संकट को अभिव्यक्त करने के लिए नये कवियों ने "महाभारत" "रामायण" और उपनिषदों के पात्रों और प्रतीकों, कथा अर्थों और जीवन-आशयों का प्रयोग किया है, इस सन्दर्भ में "अन्धा युग" संशय की एक रात" "आत्मजयी" "एक कंठ विषपायी" और "शम्बूक" जैसी कृतियों का उल्लेख किया जा सकता है । §2§

---

1. एक रण वैचारिकी है शेष - डॉ0 विष्णु विराट - पृ0 - 20-21
2. नयी कविता की पहचान - डॉ0 राजेन्द्र मिश्र -पृ0 - 63 वाणी प्रकाशन 61 एक, कमलानगर, दिल्ली ।

साठोत्तरी कविताओं में व्यक्ति की चिन्ता और विषाद की अभिव्यक्ति के लिए कवि "धर्मवीर भारती" ने "महाभारत" के लचीले आख्यान और उसकी प्रतीतियों को नया अर्थ विस्तार दिया है, "कौरवों की अंतिम पराजय-संध्या से प्रारम्भ होने वाली "अंधा-युग की कथा के मूल में दूसरे महायुद्ध की स्थितियों और बाद की प्रतिक्रियाओं का गहरा अहसास मौजूद है, मानवीय मूल्यों की रक्षा के लिए लड़े गये युद्ध में मानवीय मूल्य ही आहत हुए, "अन्धा युग" दोनों ही पक्षों के विवेकहीन आचरण और अंधी दृष्टि का भयावह प्रतिफल है, उक्त पंक्तियाँ दृष्टव्य है :-

टुकड़े - टुकड़े हो बिखर चुकी मर्यादा
उसको दोनों ही पक्षों ने तोड़ा है
पान्डव ने कुछ कम कौरव ने कुछ ज्यादा
यह रक्त पात अब कब समाप्त होना है,
क्या अजब युद्ध हैं नहीं किसी की भी जय
दोनों पक्षों को खोना ही खोना है
अँधों से शोभित था युग का सिंहासन
दोनों ही पक्षों में विवेक ही हारा
दोनों ही पक्षों में जीता अंधापन
भय का अंधापन, ममता का अंधापन
अधिकारों का अंधापन जीत गया
जो कुछ सुन्दर था, शुभ था, कोमलतम था
वह हार गया .... द्वापर युग बीत गया । [1]

महा भारत की कथा को कौरव - पान्डव युद्ध के रूप में देखा जाता है, किन्तु यह युद्ध की कथा नहीं है, इसमें देवता और असुरों के पौराणिक संघर्ष की तरह दो विरोधी शक्तियाँ आपस में नहीं टकराती - वास्तव में "महाभारत " संकीर्ण धर्म और व्यापक धर्म के आपसी द्वन्दों की कहानी है, "अन्धायुग" के कवि ने "महाभारत" की अन्तर्विरोधी संरचना से अपने लिए अधिकतम् स्वतंत्रता अर्जित की है, एक स्तर पर समूची कविता अलग-अलग प्रसंगों में युद्ध और उसकी प्रतिक्रियाओं को परिभाषित करती है, दूसरे स्तर पर वह पात्रों को अपने आपको लगातार खोजनें टटोलने की प्रक्रिया में जीने या मरने के अर्थ की तलाश भी करती है, "अन्धा युग" के पात्र दूसरों से कम अपने आप से ज्यादा प्रताड़ित हैं । [2]

---

1. नयी कविता की पहचान - डॉ० राजेन्द्र मिश्र - पृ० - 64
2. -वही- पृ० - 65

साठोत्तरी कवियों ने मिथक के माध्यम से भारत की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, गतिविधियों को भी उजागर किया है, स्वयं धर्मवीर भारती ने "अन्धा युग" काव्य के माध्यम से आज की जनता को सचेत किया है, क्था स्वतन्त्रता और साहस जैसे मानवीय मूल्यों के प्रति गहरे लगाव की अनुपस्थिति में अपने समय के विघटन को रचना में समझ सकना ही काव्य और कवि की चिन्ता को व्यक्त करना है, अगर "अन्धा युग" काव्य के मूल में जायँ तो हमें यह अहसास होगा कि इसमें घृणा ही नहीं करुणा भी है ।

"निराला" ने "राम की शक्ति पूजा" में राम के जय - पराजय - सम्बन्धी द्वन्द्व को अधिक प्रत्यक्ष प्रसंगों में उभारने की कोशिश की है, लेकिन इसमें भी द्वन्द्व की समाप्ति पर पौराणिक संस्कारों की छाप ज्यादा है, इसके अलावा आधुनिक जीवन के अन्तर्विरोधों को उजागर करने के सन्दर्भ में निराला जी ने राम को भी खूब ललकारा है, कुल मिलाकर कहें तो स्वतंत्र भारत के व्यक्ति ने विभाजनोपरान्त भारतीय जन जीवन में हुए विघटन को देखा, नेताओं के चारित्रिक बल के ह्रास को देखा, जिजीविषा के लिए भटकते हुए युवा वर्ग के नैतिक पतन को देखा, और सामाजिक अधोगति के कारण ह्रासशील मूल्यों को देखा, तथा विभाजन और विश्व युद्धों के कारण हुए मानवीय मूल्यों के विघटन का साम्य महाभारत या राम - रावण युद्धों से बिठाकर मिथकीय कविताओं में इस मूलगत विघटन को अभिव्यक्ति प्रदान की ।

साठोत्तरी कविता में मिथकों के माध्यम से विश्व के सामने युद्ध की जो तैयारियाँ चल रही है, और वे शक्तियाँ सारे मानव जाति के नष्ट करने पर तुली है, ऐसे मूल्यों के विघटन के प्रति सबसे पहले "धर्मवीर भारती" ने अपनी चिन्ता व्यक्त की है, स्वतंत्र भारत में राजनैतिक नेताओं में फैली हुई, अवसरवादिता, शोषण की प्रवृत्ति तथा उनके हथकन्डों में उटपटाते हुए जन समाज की परिस्थिति का उद्घाटन करते हुए, कवि ने वर्तमान स्थिति पर व्यंग्य किया है, उनका मत है, कि स्वार्थ प्रेरित व्यक्ति ही मूल्यों के लिए विध्वंसकारी सिद्ध होती है । समस्त मानव जाति के विनाशकारी सामाग्री तैयार करने वाली शक्तियों का वर्णन करते हुए में लिखा है :- एक उद्धरण द्रष्टव्य है ।

सत्ता होगी उनकी / जिनकी पूँजी होगी /
जिनके नकली चेहरे होंगे / केवल उन्हे महत्त्व मिलेगा /.....
राजशक्तियाँ लोलुप होंगी /.... जनता उनसे पीड़ित होकर, गहन-
गुफाओं में छिप-छिपकर दिन काटेगी/ गहन गुफाएँ /
वे सच मुच की या अपने कुंठित मन की । §1§

वर्तमान समय में शासकवर्ग जनता का भरपूर शोषण कर रहा है, इसलिए नैतिक मूल्यों का भी पतन हो गया है, जो महान शक्तियाँ है वह अपने अधिकार क्षेत्र को बढ़ाने में लगी है, वह सुरसे की तरह मुँह खोलकर खड़ी है, युद्ध होगा, निश्चित है, किन्तु सबसे पहले पहल कौन करे ? अगर युद्ध होगा, तो मूल्यों का विनाश होगा ही, मानव जाति नष्ट हो जायेगी, युद्ध के बाद विकारग्रस्त जन समाज की मर्यादाओं को फिर से स्थापित करना असम्भव नहीं तो दुष्कर हो जायेगा इस संदर्भ को "धर्मवीर भारती" ने बड़े सहज ढ़ग से उठाया है, देखिए एक उद्धरण :-

युद्धोपरान्त, यह अन्धायुग अवतरित हुआ, जिसमें स्थितियाँ,
मनोवृत्तियाँ, आत्माऐं सब विकृत हैं, है एक बहुत पतली,
डोरी मर्यादा की, पर वह भी उलझी है दोनों ही पक्षों में,
सिर्फ कृष्ण में साहस है सुलझाने का, वह है भविष्य का -
रक्षक है, वह है अनाशक्त, पर शेष अधिकतर हैं अंधे पथभ्रष्ट आत्महारा,
विगलित, अपने अंतर की अंधगुफाओं के वासी । §2§

वर्तमान समय में अन्तरराष्ट्रीय कानून के कारण विश्व का कोई भी राष्ट्र यह दावा नहीं कर सकता, कि युद्ध में किस की जीत हुई, और किसकी पराजय, विनाशकारी भूमिका निभा कर सारी सेनाऐं अपनी-अपनी बैरक में एवं सीमा तक लौट जाने के लिए विवश हो जाती हैं, सारा - विश्व इस बात को जानता है, कि ऐसे युद्ध से लाभ, नहीं बल्कि हानि ही होती है, भारतीय फलक पर नजर दौड़ायें तो हमने भी कई युद्ध देखें हैं, लड़ा है, किन्तु इससे कोई लाभ नहीं हुआ, ऐसे युद्धों में जीत और हार, तथा मर्यादा का कोई मूल्य नहीं रह जाता है, जब तक विवेकहीनता और उत्तरदायित्वहीनता से पीड़ित युद्ध में उन्माद और अंधापन बना रहेगा, तब तक यह युद्ध बहुत ही भीभत्स साबित होगें । ऐसी स्थिति का पुनरावर्तन न हो, इस उद्देश्य से धर्मवीर भारती कहते हैं :-

---

1. अन्धा युग - धर्मवीर भारती - पृ0 - 12
2. -वही- पृ0 - 12

" यह अजब युद्ध है, नहीं किसी की भी जय, दोनों पक्षों,
को खोना ही खोना है, अन्धो से शोभित था, युग का सिंहासन,
दोनों ही पक्षों में विवेक ही हारा, दोनों पक्षों में जीता -
अंधापन, भय का अन्धापन, ममता का अंधापन, अधिकारों का अंधापन,
जीत गया, जो कुछ सुन्दर था, शुभ या कोमलतम था । वह हार गया
द्वापर युग बीत गया । " §1§

आज विश्व के सामने सबसे बड़ा प्रश्न है, कि हर राष्ट्र अपनी - अपनी मर्यादा को तोड़ने पर तुला है, एक दूसरे की सीमाओं का उलंघन हो रहा है, चोरी छुपे कुछ अज्ञात लोगों को घुसपैठ कराकर मजदूरों और किसानों पर जो कि बिल्कुल निर्दोष हैं, उनकी हत्या करवाई जा रही है, धर्म के नाम पर लोगों को तोड़ा जा रहा है, मोहांध व्यक्ति हो या फिर मोहांध राष्ट्र हो, दोनों की स्थिति भयंकर हो सकती है, विवेकहीन शासक भी भयानक युद्धों को आमंत्रण देता है, ऐसे विवेकहीन युद्ध जिन राष्ट्रों ने खेला है, वहाँ की संस्कृति व्यक्ति मूल्य, आस्था, साहस श्रम, आदि का विनाश हो जाता है, मर्यादा के अतिक्रमण से व्यक्ति निरंकुश तथा विनाशकारी हो जाता है । " अन्धा युग " में कृष्ण ने धृतराष्ट्र को सचेत किया है । एक उदृरण देखें :-

" मर्यादा मत तोड़ो / तोड़ी हुई मर्यादा / कुचली हुई अजगर सी /
गुंजलिका में कौरव वंश को लपेट पर सूखी-लकड़ी - सा तोड़ डालेगी।"§2§

परन्तु धृतराष्ट्र ने कृष्ण की एक नहीं सुनी, उसकी घोर व्यक्तिवादिता ने ही मूल्यों का ह्रास किया, स्नेह, घृणा, नीति, धर्म, नैतिकता का मापदन्ड उसका अपना ही था, उसकी वैयक्तिकता ही उसके लिए अंतिम सत्य था, तो मूल्यों का ध्वंस होना ही था, धृतराष्ट्र अपनी मोहांध वृत्तियों पर पश्चाताप करता है, कि वह जन्मान्ध था, बाहर का संसार उसने देखा ही नहीं था, वैयक्तिक संवेदना से उसने जो कुछ जाना था, उसका अनुभव उसी तक सीमित था, वह सामाजिक मर्यादा को ग्रहण ही नहीं कर सका था, उसकी सभी वृत्तियाँ वैयक्तिक थीं, अतिव्यक्तिवादिता से ही वह संचालित था, वह तो उत्तरदायित्वहीन अंधेपन के काले बिन्दु से परिचालित था, उससे सर्व मंगल के विवेक की अपेक्षा की ही नहीं

---

1. अंधा युग - डॉ0 धर्मवीर भारती - पृ0 - 13
2. -वही- पृ0 - 19

जा सकती थी, उसके लिए तो सारा जगत ही वैयक्तिक सीमाओं में आबद्ध था - देखिए एक उद्धरण :-

" मेरा स्नेह, मेरी घृणा, मेरी नीति, मेरा धर्म, बिल्कुल मेरा ही वैयक्तिक था, उसमें नैतिकता का कोई बाह्य मापदन्ड था ही नहीं, कौरव जो मेरी - मांसलता से उपजे थे, वे ही थे अंतिम सत्य, मेरी ममता ही वहाँ नीति थी, मर्यादा थी । " §1§

"भारती" ने ह्रासशील मूल्यों के दौरान मूल्यों की बात करनेवाली वृत्ति को बेकार माना गया है, गांधारी ह्रासग्रस्त मूल्यों के प्रति वितृष्ण हो चुकी है, इसी कारण उसने अपनी आँखों पर पट्टी बाँधे हुए हैं, और व्यक्तिवादिनी बन चुकी है, वह तत्कालीन आधुनिक मूल्यों की स्थिति पर व्यंग्य प्रहार करती है, एक उद्धरण दृष्टव्य है :-

" मैंने यह बाहर का वस्तु-जगत अच्छी तरह जाना था ।
धर्म, नीति, मर्यादा यह सब हैं केवल आडम्बर मात्र
मैंनें यह बार - बार देखा था । " §2§

मूल्यों की इसी स्थिति के कारण गंधारी ने घोर व्यक्तिवादिता को अपनाया है, क्यों कि तत्कालीन युग में सभी लोग अन्धी वृत्तियों से परिचालित थे, और निर्णय के क्षणों में विवेक और मर्यादा की अपेक्षा घोर व्यक्तिवादिता ही वरीयता प्राप्त करती है, "धर्म वीर भारती का कहना है कि :-

" निर्णय के क्षण में विवेक और मर्यादा, व्यर्थ सिद्ध होते-
आये हैं, सदा हम सब के मन में कहीं एक अन्ध -
गहर है, बर्बर पशु, अन्धा पशु वाश नहीं करता है,
स्वामी जो हमारे विवेक का, नैतिकता मर्यादा, अनाशक्ति -
कृष्णार्पण, यह सब हैं अन्धी प्रवृत्तियों की पोशाकें । " §3§

इस संसार में द्वितीय विश्व युद्ध में प्रयुक्त अणुबम की ही अनुगूँज है, "नागासाकी" और "हिरोसिमा" पर गिरे अणुबमों ने न केवल धन सम्पदा को बल्कि लाखों लोगों को ध्वस्त कर दिया था, अश्वत्थामा का यह ब्रह्मास्त्र मानवी अस्तित्व को धरती पर से मिटाने की शक्ति रखता है, "अश्वत्थामा" अर्थात् एक व्यक्ति की प्रतिहिंसा "अंधायुग" में समूची मानव जाति के लिए विनाशकारी होती जा रही है । कवि धर्मवीर भारती कहते हैं :-

---

1. नयी कविता में मिथक - डॉ० राज कुमार - पृ० - 72
2. अन्धा युग - धर्मवीर भारती - पृ० -23
3. -वही- पृ० - 23

1. " यह है ब्रह्मास्त्र, अर्जुन स्मरण करो, अपने विगत, कर्म,
इसके प्रभाव को, एक क्या करोड़ कृष्ण मिटा नहीं पाएँगें,
विवश किया है, मुझे अर्जुन ने, यह लो यह है ब्रह्मास्त्र । " §1§

2. " अश्वत्थामा व्यक्तिगत दर्प के कारण मानव जाति के प्रति -
अनुत्तरदायी हो जाता है ।
भस्म हो जाने दो, आने दो प्रलय व्यास, देखूँ मैं रक्षण -
शक्ति कृष्ण की । " §2§

अश्वत्थामा का यह व्यवहार व्यक्तिगत कायरता, विवशता, तथा आत्मरक्षा के कारण असंतुलित हो गया है ।

" मैं क्या करूँ मुझको विवश किया अर्जुन ने, मैं था -
अकेला और अन्यायी कृष्ण पान्डवों के सहित मेरा बध
करने को आतुर थे । " §3§

व्यास अश्वत्थामा की भर्त्सना करते हैं, कि उसने घोर व्यक्तिवादिता के कारण समूची मानव जाति का विनाश करने की ठानी है, व्यास अश्वत्थामा को ब्रह्मास्त्र लौटा लेने का आग्रह करते हैं ताकि मानव अस्तित्व को बचाया जा सके, भारती जी कहते हैं कि :-

" अश्वत्थामा, अपनी कायरता से तू, मत ध्वंस्त कर
मनुजता को वापस ले अपना ब्रह्मास्त्र और मणि-
देकर, वन में चला जा ... । §4§

धर्मवीर भारती ने अश्वत्थामा के अमर्यादित और बुद्धिविहीन अस्त्र - उपयोग पर तीखा व्यंग्य किया है, "अन्धा युग" के अश्वत्थामा का ज्ञान अधूरा है, वह ब्रह्मास्त्र छोड़ तो सकता है, किन्तु उसे वापस नहीं ले सकता, फिर भी व्यास से प्रेरित होकर वह मानवता की रक्षा करने के उद्देश्य से ब्राह्मास्त्र को "उत्तरा" के गर्भ की ओर मोड़ देता है । एक उद्धरण दृष्टव्य है :-

" व्यास । मैं अशक्त हूँ, मुझको है ज्ञात रीति केवल आक्रमण की,
पीछे हटना मुझको या मेरे अस्त्रों को, मेरे पिता ने सिखाया नहीं,
अच्छा तो सुन लो, व्यास, सुन लो कृष्ण, - यह अचूक अस्त्र -

---

1. अन्धायुग - धर्मवीर भारती - पृ0 - 94
2. -वही- पृ0 - 94-95
3. -वही- पृ0 - 95
4. -वही- पृ0 - 96

अश्वत्थामा का, निश्चित गिरे जाकर, उत्तरा के गर्भ पर ।
वापस नहीं होगा । " । §1§

वैज्ञानिक विकास की चरम परिणति जिसमें विज्ञान मनुष्य-ता को विनाश के ऐसे कगार पर खड़ा कर देता है, जहाँ वह मनुष्यता अपने बचाव के सभी उपायों से अनभिज्ञ महसूस करती है, विध्वंसकारी अस्त्र-शस्त्रों के अधूरे ज्ञानी अश्वत्थामा के पशु तुल्य व्यवहार की व्यास भर्त्सना करते हैं, तो अश्वत्थामा स्पष्ट कहता है, कि वह तो पशु नहीं था, परन्तु युधिष्ठिर के अर्धसत्य ने उसे पशु बनाया है, "धर्मवीर भारती" "अन्धायुग" काव्य में घोर व्यक्तिवादी प्रवृत्तियों के कारण मानव का जो अवमूल्यन होता है, उसके प्रतिशोध के लिए पीड़ित व्यक्ति सभी मानवी मूल्यों का विध्वंस करके मानव अस्तित्व के लिए भी आतंक बन जाता है । §2§

"धर्मवीर भारती" ने "अन्धायुग" के अंतिम पंक्तियों में आधुनिक युग के मानव के सद्प्रयत्नों में अपनी आस्था व्यक्त की है, उद्धरण देखिए :-

"पर एक तत्व है बीज रूप स्थित मन में,
साहस में, स्वतंत्रता में, नूतन सृजन में,
वह है निरपेक्ष उतरता है पर जीवन में,
दायित्व युक्त, मर्यादित, मुक्त आचरण में
उतना जो अंश हमारे मन का है,
वह अर्द्धसत्य से ब्रह्मास्त्रों के भय से,
मानव भविष्य को हरदम रहे बचाता
अन्धे संशय, दासता, पराजय से । §3§

विवेक, सभ्यता और उत्तरदायित्वपूर्ण आचरण से ही व्यक्ति औरव्यक्ति मूल्यों की सुरक्षा हो सकती है, घृणा, द्वेष, प्रतिशोध, प्रतिहिंसा, और क्रोध और आवेश की अपेक्षा प्रेम आत्मविस्तार, मर्यादित, सन्तुलित और विवेक सम्मत आचरण ही व्यक्ति को आमानवीकरण से और - अमानवीकरण जन्य-ह्रास मूल्यों के प्रति मोहांधता से रोक सकता है । अन्यथा मानव की आस्था और भविष्य धूमिल हो जायेगा ।

---

1. अन्धा युग- डॉ0 धर्मवीर भारती-पृ096 - नयी कविता में मिथक - डॉ0 राज कुमार - पृ0 - 77
2. नयी कविता में मिथकों के माध्यम से आमानवीकरण की अभिव्यक्ति - डॉ0 राज कुमार - पृ0 - 77
3. अंधा युग - डॉ0 धर्मवीर भारती - पृ0 - 132

जब तक जन समाज में विवेक, विचार, बुद्धि ज्ञान, धैर्य, प्रेम की अपेक्षा घोर व्यक्तिवादी अन्ध प्रवृत्तियों को प्राथमिकता दी जायेगी, और युद्धों के प्रति अन्धा अनुकरण होता रहेगा, युद्ध व्यक्ति का विघटन करता है। यह प्रणाली जब तक चालू रहेगी, तब तक युद्धों में अमानवीकरण और मूल्यों का विनाश होता रहेगा, इसमें आदर्श आचरण की अपेक्षा धोखा, अन्याय, छल-कपट के अलावा कुछ भी शेष नहीं बचता, "धर्मवीर भारती का कथन है :-

" मैं बलिदान इस संघर्ष में / कटु व्यंग्य हूँ उस तर्क पर जो
जिन्दगी के नाम पर हारा गया, आहूत हो युद्धाग्नि में
वह जीव हूँ निष्पाप / जिसको पूजकर मारा गया / वह
शीश, जिसका रक्त सदियों तक बहा / वह दर्द जिसको बेगुनाहों ने सहा।
§1§

अभिमन्यु की यह पीड़ा योद्धाओं की परम्परागत पीड़ा है, मानव को एक साधारण वस्तु समझकर युद्ध के लिए भेज दिया जाता है, कवि कुँवर नारायण का कथन है, कि कई युगों से उनके साथ यह अन्याय हो रहा है, आज के युग में व्यक्ति के जीवन का कोई महत्व नहीं रहा ।

"कवि दिविक रमेश" ने भी युद्ध के सम्बन्ध में अपनी प्रतिक्रिया "रास्ते के बीच" काव्य संग्रह में संकलित कविता एक "पौराणिक प्रसंग" में उन्होंने कृष्ण को ही अमानवीकरण का प्रेरक माना है, उन्होंने ही युद्ध में शौर्य की अपेक्षा विजय नीति को महत्व देते हुए "जयद्रथ" का अनीति परक वध करवाया है, इनके इसी अधर्म आचरण के कारण आधुनिक युद्धों में धर्म, न्याय या सत्य की अपेक्षा विजय को महत्व मिला है, और विजय प्राप्त करने के लिए मानव मूल्यों को भ्रष्ट किया जाता रहा है, एक उद्धरण द्रष्टव्य है :-

" मेंधों का दल / न बनीं होती तुम्हारी चाल / तो युद्ध कभी
अभिशाप न हुआ होता /... तुमने देखा / महायुद्ध भी /
आदमी की तरह / चरित्रहीन हो चुका है।/ महज निर्वीर्य व्यक्ति का/
एक चालाक शौक रह गया है ? सुनों/तुमने शुरूआत की थी /
जिसका दन्ड / आदमी भोग रहा है । §2§

---

1. "चक्रव्यूह" में संकलित कविता - कवि कुँवर नारायण - पृ0 - 81
2. रास्ते के बीच - कवि दिविक रमेश - पृ0 - 30

नये कवियों ने घोर व्यक्तिवादी अन्ध प्रवृत्तियों से प्रेरित व्यक्ति को मूल्यों के लिए विनाशकारी सिद्ध किया है, ऐसे व्यक्ति अपने निजी स्वार्थ के लिए समूचे मानव जाति के लिए खतरा उत्पन्न कर रहे हैं, निजी स्वार्थ ही युद्धों को जन्म देता है, और जब युद्ध होगा, तो यह निश्चित है, कि किसी भी पक्ष की तरफ से मर्यादा का उल्लंघन होने वाला है ।

व्यक्तिगत मान-मर्यादाओं की रक्षा के लिए व्यक्ति अपने सगे - सम्बन्धियों की भी अवहेलना कर देता है, अपने अपमान के प्रति शोध के लिए अन्ध प्रवृत्ति से संचालित होकर व्यक्ति अपने विरोधी से युद्ध करने के लिए तत्पर हो उठता है, और फिर यहीं से युद्ध में मूल्यों का विनाश होना प्रारम्भ होता है ।

" एक कन्ठ विषपायी " का दक्ष और व्यक्तिवादिता और अहंग्रस्त दर्प का प्रतीक है, इसी दर्प के कारण वह समझता है, कि शंकर और सती ने प्रेम - विवाह करके उसका अपमान किया है, सारे समाज के समक्ष उसके सिर को नीचा किया है, और अपने इसी अपमान का प्रतिशोध लेने के लिए दक्ष शंकर की अवहेलना करता है, उनके अस्तित्व तक को चुनौती देता है, उसे लगता है, कि शंकर और सती ने मर्यादा को अपमानित किया है, घर की प्रतिष्ठा की हत्या की है, एक उद्धरण देखें :-

" उन दोनों ने केवल मेरी / बाह्य प्रतिष्ठा खण्डित की है ।
उनकी आत्म-प्रतिष्ठा का भ्रम तोड़ूँगा मैं /...../
हर अवसर / हर आयोजन पर / अपनी अवहेलना देखकर /
शंकर का देवत्व स्वयं ही झुलस उठेगा ।/ इतनी बड़ी उपेक्षा /
और अवज्ञा / उसको सह्य न होगी । " §1§

इस घोर व्यक्तिवादिता के कारण जन-धन की इतनी हानि होती है, कि भयंकर भुखमरी फैल जाती है, भूख से त्रस्त जनता आदमी का रक्त तक पीने को तत्पर हो जाती है ।

" यह तो युद्धोपरांत युग आई/संस्कृति के ह्रासमान मूल्यों का /
एक स्तूप है - भग्न - प्राय/पथ हारा...हिंसा नहीं है इसमें /
भय है..... आशंका है । " §2§

---

1. एक कन्ठ विषपायी - कवि दुष्यन्त कुमार - पृ0 - 15
2. -वही- पृ0 - 56

शंकर अपने अपमान का बदला लेने के लिए समूची मानवजाति को गाजर-मूली की तरह कटवानें पर उतारू हैं, अपमान का प्रतिशोध अपमान द्वारा ही लिया जाता है ।

डॉ0 धर्मवीर भारती की तरह दुष्यन्त कुमार भी मानते हैं कि विवेक और ज्ञान के जरिए ही युद्धों से बचा जा सकता है, विवेकहीन - अमर्यादित आचरण अपमानजनित युद्धों को आमंत्रण देता है, एक उद्धरण देखिए :-

" माना प्रभु । दक्ष का विवेक और ज्ञान/ इस परिस्थिति में छूट गया / उसका अस्तित्व / एक जर्जर परम्परा के / पोषण के यत्नों में लगा हुआ/ टूट गया / पर क्या अब शंकर ने / जो परम्पराओं के भंजक रहे हैं / दक्ष को बना कर माध्यम / हम सबको अपमानित नहीं किया ?"[1]

यदि शिव जैसे उच्चाधिकार - युक्त व्यक्ति भी शासन की मर्यादा खो देंगें, तो शासन कैसे चलेगा, आज संसार के राजनीतिक पटल पर, हम दृष्टिपात करें तो, यह बात खुलकर सामने आ जाती है, कि जिसको भी सर्वसत्ताधीश का पद मिला, वह अपने पद का दुरुपयोग व्यक्तिगत् स्वार्थ के लिए ही करता रहा है,। एक उद्धरण देखिए :-

" दक्ष ने यज्ञ में / आमंत्रित थे सभी देव / था किन्तु उपेक्षित मैं / पर तुमने दिया ध्यान ? /.../ देवत्व और आदर्शों का परिधान ओढ़/ मैंने क्या पाया ?/ निर्वासन / प्रेयसि वियोग ।।/ हर परम्परा के मरने का विष,/ मुझे मिला,/ हर सूत्रपात का / श्रेय ले गए और लोग /...../ मित्र अगर होते तुम / मेरा अपयश या अपमान न होता, / या तो यज्ञ न होता / अथवा ऐसा कलिक विधान न होता / मित्र अगर होते तुम / मेरी आत्मा यों विद्रोह न करती / भरी सभा में मेरी प्रिया / निरादृत होती और न मरती । " [2]

आधुनिक कवियों ने पौराणिक एवं मिथकीय सन्दर्भों के माध्यम से किस तरह शंकर की आत्मा विद्रोह करके अपने अपमान का बदला लेते हैं, इस काव्य में इन्द्र, वरुण, कुबेर, और शंकर वस्तुतः आज के व्यक्तिवादी युग के प्रतिनिधि हैं । इन्द्र और वरुण व्यक्तिवादी राजशक्तियों का और कुबेर व्यक्तिवादी पूँजीपति के प्रतीक हैं । एक उद्धरण देखें :-

---

1. एक कन्ठ विषपायी - कवि दुष्यन्त कुमार - पृ0 - 57
2. -वही- पृ0 - 83-84,86,87

" क्या यह भी लौकिक नेताओं का प्रजा तंत्र है,/जो जब चाहे/
इच्छाओं से परिवर्तन कर/नियमों को अनुकूल बना लें ।"§1§

कवि दुष्यंत कुमार यहाँ पर आधुनिक प्रजातंत्र पर व्यंग्य करते हैं, उनका कहना है, कि ब्रह्मा लौकिक प्रजातंत्र के नेताओं की तरह नियमों के इच्छानुकूल परिवर्तन के लिए तैयार नहीं है ।

ऐसे ही कई आधुनिक प्रसंगों को उठाते हुए "कवि नरेश मेहता" ने भी अपने काव्य संग्रह "संशय की एक रात" में राम, हनुमान, लक्ष्मण, और विभीषण के माध्यम से मानव जाति के प्रति हो रहे अत्याचार के लिए संघर्ष करते है, रावण अपने दरबार में राम के दूतों को अपमानित करके लौटा देता है, यह सुनकर राम की चिन्ता बढ़ जाती है, क्यों कि राम यह नहीं चाहते कि उनकी व्यक्तिगत समस्या के लिए अपने सखा बंधुओं को युद्ध के लिए तैयार होना पड़े, और सम्पूर्ण मानव जाति को कष्ट पहुँचे । एक उद्धरण देखें :-

"मात्र विवशता ही नहीं है, नहीं है हम /केवल परिचालित यंत्र मात्र/
किसी अदृश्य/अन्धे हाथों के / कितने ही लघु हों/ इससे क्या ?
सार्थक हैं । " §2§

संसार में जिन राष्ट्रों के पास साधन है, जिन्होंने विज्ञान के क्षेत्र में आगे है, वे अपनी शक्ति के दंभ को मानव मात्र के लिए चुनौती है, उनकी व्यक्तिवादिता के लिए वे छोटे - छोटे राष्ट्रों के सामने शर्तें रखकर उन पर अपना प्रभुत्व रखना चाहते हैं, किन्तु ऐसे भी राष्ट्र हैं, जो इन शक्तियों के सामने अपने स्वप्न के हरण की छूट देने के लिए कदापि तैयार नहीं हैं, । एक उद्धरण देखें :-

" किन्तु यह असम्भव है / बंधु / यह असम्भव है ।/ कर्म और वर्चस्व को/
छीन सके कोई भी / जब तक हम जीवित हैं । " §3§

"संशय की एक रात" में कवि नरेश मेहता ने इन राष्ट्रों के दर्प को व्यक्तिगत अहंकार का कारण उनकी तुलना रावण से की है, और अगर कोई राष्ट्र स्वतंत्रता से जीना चाहता है, तो वह उनकी मांगों को ठुकरा देते हैं,
एक उद्धरण देखिए :-

---

1. एक कण्ठ विषपायी - कवि दुष्यन्त कुमार - पृ0 - 108,109
2. संशय की एक रात - कवि नरेश मेहता = पृ0 - 14
3. -वही- पृ0 - 16

" जब - जब उपनिवेशों ने किया /विद्रोह/उनके लोग, संस्कृतियाँ-
और इतिहास तक को /भस्म कर डाला/ जब मैंने कहा /
मुझे निष्कासित किया ।" §1§

न्याय की मांग को ठुकराकर इन महाशक्तियों ने विज्ञान के बल पर विश्व मानस पटल पर तथा उसकी स्वतंत्रता एवं संस्कृति को भी विनाश के कगार पर लाकर खड़ा कर दिया है, वह मानव जाति को मानव न समझकर उसे मात्र साधारण वस्तु की तरह उसका उपयोग कर रहे हैं, यह मानवीय अस्तित्व के हत्यारे हैं, अतः इनके विरुद्ध संघर्ष आवश्यक है, हनुमान भी विभीषण, और लक्ष्मण की तरह रावण को मनुज जाति के लिए ध्वंसक मानते हैं, और हनुमान स्पष्ट रूप से कहते हैं, कि रावण तो साम्राज्यवादी शक्ति का परिचायक है, एक उद्धरण देखिए :-

" महाराज ।/साम्राज्य वृत्ति के द्वारा/ हम साधारण जन/
अर्थ सम्भव कर दिए गए / हमनें राक्षस रथ खेंचे ।/
दास भाव से/ बदले में / नर नहीं /बानर पद प्राप्त किया/
लंका में हम / भोज्य पदार्थों से बिकते हैं / गरम सलाखों से/
प्रत्येक पृथुज्जन देह लिखी है / ये गुलाम हैं / इनका केवल यही -
नाम है । " §2§

साठोत्तरी हिन्दी कविता में मिथकों के माध्यम से आधुनिक युग की और वर्तमान समय की घोर व्यक्तिवादिता के मूल को उजागर किया गया है, मिथों के परिपेक्ष्य में नये कवियों ने आधुनिक व्यक्ति की घोर व्यक्तिवादिता को ही मूल्यों के लिए ध्वंसकारी माना है, व्यक्तिवादिता के कारण ही आज समाज में अलगाव की स्थिति, उत्पन्न हो रही है, निजी स्वार्थ, मान, अपमान, उपेक्षा, बहिष्कृति से लाचार होकर व्यक्ति प्रतिशोध के लिए अन्ध प्रवृत्तियों का अनुकरण कर रहा है, और विवेक हीन बनकर समूचे मानवजाति के लिए संकट का विषय बन गया है । "अन्धायुग" का "अश्वत्थामा" "एक कन्ठ विषपायी" का "शंकर" आदि अपने अपमान के प्रतिकार के प्रतीक हैं । जो व्यक्तिगत अपमान के प्रतिकार के लिए समूचे विश्व के लिए विनाशकारी हो जाते हैं, व्यक्तिगत जिजीविषा के लिए अश्वत्थामा अणु बम के प्रतीक ब्रह्मास्त्र तक का उपयोग कर डालता है, जबकि उस

---

1. संशय की एक रात - कवि नरेश मेहता - पृ0 - 75
2. -वही- पृ0 - 65

ब्रह्मास्त्र के संचालन का पूर्ण ज्ञान तक भी उसे नहीं है, अक्सर हम देखते हैं कि मिथकीय रचनाओं के सभी पात्र आधुनिक युग की घोर-व्यक्तिवादिता के प्रतीक हैं, और ये सभी पात्र व्यक्तिगत् स्वार्थ, लोलुपता, और अन्य अन्ध-प्रवृत्तियों से संचालित दिखाई पड़ते हैं ।

भारत जैसे लोकतान्त्रिक देश में अनेक राजनीतिक पार्टियों का विकास हुआ है, हर पार्टी अपना-अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिए भारत की जनता का खूब लाभ उठाया, इन पार्टियों ने समाज को कई भागों में विभाजित कर दिया है, यह पार्टियाँ जाति, धर्म को आधार बनाकर चुनाव क्षेत्र में उतरती हैं, और इसी के साथ भारत में अनेक तथा कथित अक्षरवादी नेताओं का जन्म हुआ है, जो व्यक्तिगत लाभ के लिए व्यक्ति को अनेक खतरनाक षड्यन्त्रों और अन्य हथकन्ड़ों में फँसाकर कहीं भी दंगे करवा रही है, और कहीं पर आसामाजिक तत्वों के साथ हाथ मिलाकर, देश के टुकड़े-टुकड़े करने पर तुले हुए हैं, इस तरह से इन नेताओं ने देश में ऐसे माहौल को जन्म दिया है, कि आज का व्यक्ति, न्याय, धर्म, प्रेमभाव, तथा अन्य हार्दिक सम्बन्धों को भूल कर अपने प्रत्येक सद्गुण का व्यावसायीकरण करने के लिए लाचार हो जाता है, ऐसे लोगों के प्रति नये कवियों ने मिथकों के माध्यम से अपना विरोध प्रकट किया है, । एक उद्धरण देखिए :-

> " सुदूर भविष्य में / क्या यह नहीं सम्भव है कि /
> राज्य व्यवस्था / समाज से स्वतंत्र - चेता व्यक्तियों को ही /
> या तो समाप्त कर दे / या उन्हे इतना विवश, पंगु बना दे कि /
> उनका अग्नि - व्यक्तित्व / राज्य - व्यवस्था की निरंकुशता को /
> कभी चुनौती ही न दे पाए । [1]

"महा प्रस्थान" के कवि नरेश मेहता का मानना है, कि स्वार्थ प्रेरित राज्य सत्ता अपने राजनीतिक स्वार्थ के लिए व्यक्ति का घोर अमानवीकरण करती है, उसे उपभोग की वस्तुमात्र बना देती है, सत्ता सम्पन्न व्यक्ति सत्य, न्याय, धर्म, भ्रातृ-प्रेम या अन्य हार्दिक सम्बन्धों को तिलांजलि देकर व्यक्ति को वस्तु की तरह इस्तेमाल करता है, जो सचमुच बुद्धिजीवी व्यक्ति है, वे राजनीति की गरिमा के लपेट में जाकर भ्रष्ट हो जाते हैं । "

---

1. महा प्रस्थान - कवि नरेश मेहता - पृ0 - 108-109

" धार एक व्याकुल " में संकलित कविता "युधिष्ठिर की खोज में" कवि खगेन्द्र प्रसाद ठाकुर" ऐसे राजनीतिक सत्ता से सम्पन्न नेताओं द्वारा किये जा रहे अमानवीकरण, को स्पष्ट किया है, इस कविता का नायक "विदुर" बुद्धिजीवी है, जो राजाश्रय में हो रहे अपने अवमूल्यन से पीड़ित है । वह घोर स्वार्थी और मोहांध धृतराष्ट्र की अपेक्षा सत्य, न्याय, धर्म, और भ्रातृ प्रेम का निर्वाह करने वाले शासक युधिष्ठिर की तलाश में है । स्वार्थी राजनीतिज्ञ परम बुद्धिजीवियों का अमानवीकरण कर रहे हैं, इस ओर विदुर संकेत करते हुए स्पष्ट करते हैं, । एक उद्धरण दृष्टव्य है :-

" मैं हूँ / मैं विदुर ..... ।/ अखबारों में तो / समाचार -
मेरी भी आत्मघात का / छपा था बड़े - बड़े अच्छरों में, /
कोष्ठक में लिखा था - / विश्वस्त सूत्र द्वारा /
पर मैं जिन्दा हूँ । §1§

" मुट्ठियों में बंद आकार " में संकलित कविता "देश का मानचित्र" में कवि "सतीश गर्ग" ने राज परिवारों की भोग - विलास की वृत्ति के कारण हो रहे अमानवीकरण को उद्घाटित किया है :-

"विवस्त्रा तिष्यरक्षिता / रक्तिम हथेली पर - कुणाल-नेत्र-धरे /
जानें किन विचारों में / खोई है ।

तिष्यरक्षिता ने अपनी अतृप्त वासना और सौन्दर्य के अपमान का घोर प्रतिशोध लिया है, कविता के नायक कुणाल की निष्ठा, स्नेह और आदर्शों का गला घोंट कर उसे अमानवीकृत किया है, अपनी पत्नी का आदर्श प्रेमी परन्तु अमानवीकृत "कुणाल" भीख माँग कर जीवन यापन करने के लिए विवश हो गया है ।
एक उद्धरण देखें :-

" और / पत्नी के कन्धे पर / हाथ रखे कुणाल /
आज भी / लड़खड़ाता / डगर-डगर / डफली पर गा - गाकर,/
जानें किसके लिए / किस-किस से / भीख माँग रहा है । §2§

आज कल परम प्रज्ञावान और योग्य व्यक्ति भी सत्ता सम्पन्न व्यक्ति के स्वार्थ प्रेरित षड्यन्त्र में ग्रस्त होकर उपेक्षित तथा अयोग्य हो जाता है जिसकी

---

1. युधिष्ठिर की खोज - कवि खगेन्द्र प्रसाद ठाकुर - पृ0 - 74
2. देश का मानचित्र - कवि सतीश गर्ग - पृ0-

पहुँच ऊपर तक हो, वह कोई भी कार्य आसानी से करवा सकता है, योग्यता के आधार पर चयन नहीं है, चमचों का बाजार गर्म है, नेताओं का दबाव जारी है, चाहे किसी भी क्षेत्र में देखें, तो नीचे से लेकर ऊपर तक भ्रष्टाचार फैला हुआ है, । "मुठ्ठियों में बन्द आकार" में संकलित "कवि सुरेश ऋतुपर्ण" की कविता "बाण ये लक्ष्यहीन" की उक्त पंक्तियाँ देखें :-

" और न उन्हे, लक्ष्य - संधान करने दिया जाता है ।
घोषणा पत्र आते हैं / एक के बाद एक /
और घोषित कर जाते हैं / हमारे अँगूठे कटे हैं /
धनुष पकड़ नहीं सकते । §1§

सत्ता सम्पन्न गुरू द्रोण ने अपनी स्वार्थ - प्रेरित प्रतिज्ञा को पूर्ण करने के लिए अर्जुन को सर्वश्रेष्ठ धनुर्धारी सिद्ध करने के लिए एकाकी, साधना से योग्यता प्राप्त करने वाले एकलव्य का अँगूठा दक्षिणा स्वरूप लेकर उसका घोर अमानवीकरण ही तो किया था, ऐसा ही अमानवीकरण आधुनिक विश्व विधालयों के मठाधिकारी प्रोफेसर कर रहे हैं । "ईहामृग" में संकलित कविता "एकलव्य की पुकार" में "कवि वचन देव कुमार" ने इस बात की निन्दा की है, और द्रोण को अक्षम्य माना है, एक उद्धरण दृष्टव्य है :-

" किन्तु दाहिने अँगूठे की गुरू दक्षिणा पर ।
थूकेगी / अनागत पीढ़ी / नहीं कर पायेगी क्षमा /
ज्ञानार्थियों की टोली । " §2§

"चीजों को देखकर" में संकलित "अर्जुन दोनों सेनाओं के बीच" मिथकीय कविता में "कवि विश्वनाथ प्रसाद तिवारी" ने शासक द्वारा किये जा रहे अत्याचार के विरोध के लिए " महा भारत " के अर्जुन की आत्मा तक को बदल दिया है । अर्जुन सत्ता से जुड़े गुरूजनों के असंगत व्यवहार से क्षुब्ध हो उठा है, एक उद्धरण देखिए:-

" जिन्होने हमें जीवन और मृत्यु का रहस्य - समझाया था,
वे ही यहाँ ले आए मृत्यु के द्वार पर,
जिन्होने कभी दिया था, शान्ति का महामंत्र ।
वे ही ढकेल गए । रक्त के कगार पर । §3§

---

1. बाण ये लक्ष्यहीन - कवि सुरेश ऋतुपर्ण
2. एकलव्य की पुकार - कवि वचन देव कुमार -ईहामृग में संकलित कविता
3. अर्जुन दोनों सेनाओं के बीच - कवि विश्वनाथ प्रसाद तिवारी

अर्जुन को लगता है, कि जो महारथी सदाचार का उपदेश देते रहते थे, वही आदर्शों का घेरा लाँघकर सामूहिक हत्या पर उतारू हो रहे हैं, अतः यह आधुनिक अर्जुन ऐसे गुरूजनों से कोई सम्बन्ध स्थापित करने के लिए तैयार नहीं हैं, एक उद्धरण दृष्टव्य है :-

" मैनें सोचा भी नहीं था ? मेरे गुरू मेरे श्रेष्ठ / इस हद तक हो सकते हैं नकाब - पोश - मैं इन विरूप, खूंखार आकृतियों से / कोई सम्बन्ध स्थापित नहीं कर पाता / इस लिए इनसे लड़ना ही पड़ेगा / क्यों कि दूसरों से लड़ने से पहले / अपनों से निपट लेना अच्छा होता है । §1§

ये वर्तमान युग के गुरूजन और आज के नेता ही ऐसे हैं, जो आजादी के बाद आज तक राजनीति के क्षेत्र में और ज्ञान - विज्ञान के क्षेत्र में ऐसा घिनौना खेल खेल रहे हैं, जिसे देखकर नयी पीढ़ी तिलमिला उठी है, नयी पीढ़ी की इसी तिलमिलाहट को स्वर देते हुए आज का अर्जुन कहता है :- एक उद्धरण देखें ।

" लगता है मारना ही होगा महारथियों को / जिनके बीच द्रौपदी नंगी-की गई / एक युधिष्ठिर निष्कासित किया गया / ..... / कृष्ण, इनमें से एक को भी नहीं छोड़ा जा सकता । जिन्होने एक पीढ़ी को भ्रष्ट किया है / एक धर्म युग को मैला किया है । §2§

अर्जुन कहते हैं, कि इन महारथियों के सामने कैसे लड़ाई करूँ, एक तरफ उन्हे ऐसा लगता है, कि वह जिनकी गोद में खेलकर बड़े हुए, जिन्होंने उन्हे मार्गदर्शन दिया, वहीं आज उन के सामने है, किन्तु उन्हे क्रोध भी आता है, कि वे वही लोग हैं, जिनके बीच द्रौपदी को निःवस्त्र किया गया था, युधिष्ठिर जैसे धर्म योद्धा का अपमान किया । हे कृष्ण इन्होने एक पीढ़ी, एक युग को मैला किया है, इनमें से किसी को जिन्दा नहीं छोड़ना चाहिए, आधुनिक अर्जुन ने इन चीजों को देखा है, और उस स्थिति का निरीक्षण कर के अपने ही सत्तापोषक गुरूजनों के विरूद्ध अपना मत प्रकट किया है ।

विश्व की दो महान सम्पन्न शक्तियाँ संघर्षशील हैं, वे गरीब राष्ट्रों के उद्धार की बात तो करते हैं, किन्तु उनकी समस्याओं को सुलझाने के बजाय, उन्हे

---

1. अर्जुन दोनों सेनाओं के बीच - कवि विश्वनाथ प्रसाद तिवारी
2. - वही-

जटिल बना देने का प्रयास कर रहे हैं, नवीन सत्य को खोजने के बजाय उससे पलायन कर जाती है, इस सत्य को कवि दुष्यन्त कुमार ने " एक कन्ठ विषपायी " में इस मनोवृत्ति पर प्रहार किया है, निम्न पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं :-

" जो अपनी गर्दन ऊँची रखते हैं/ वे भी / नये सत्य के सम्मुख -
पड़कर नहीं देखते / वे भी सहसा नये प्रश्न से नहीं जूझते /
उससे लड़कर नहीं देखते / सिर्फ व्यस्तताओं की रचना करके /
उसे टाल जाते हैं / और युद्ध भी एक व्यस्तता का नाटक है । §1§

आज की शासन व्यवस्था सिर्फ व्यक्तिगत लाभ के लिए सामयिक स्थितियों के अनुकूल पुरानी व्यवस्था को दोष देना है, किन्तु इस दिशा की तरफ न जाकर नये संशोधन की आवश्यकता है । "अतुकान्त" में संकलित कविता "दशरथ की अस्थि" में प्राचीन परम्परा की दुहाई देकर सत्ताधारी दशरथ द्वारा किये गये राम के प्रति अन्याय को व्यक्त किया गया है ।

" दशरथ की अस्थि " में इस काव्य का नायक सत्ताधारी आधुनिक बाप का प्रतीक है, दशरथ को यह मालूम है, कि वह विवश होकर अपने पुत्र के साथ ऐसा व्यवहार किया है, पुत्र के साथ हुए व्यवहार के प्रति पश्चात्ताप करता है, कि कहीं "राम" भी उसकी तरह स्वार्थ को प्राथमिकता न दें । एक उद्धरण देखिए :-

" ओ मेरे आत्मज / मैं तुम्हारा पिता हूँ: कामातुर संज्ञा का प्रतिरूप /
मेरी आसक्तिबद्ध निष्ठा जिसे तुम्हारी विमाता ने / उपजाया है /
लो वनवासी / अर्पित है । §2§

आज का दशरथ यह जानता है, कि आधुनिक व्यक्ति कितना बेईमान तथा घूसखोर है, आज न्यायालयों में झूठ और स्वार्थ का बोलबाला है, दशरथ अपने स्वार्थ प्रेरित आदर्शों को अपने साथ ही समाप्त कर देना चाहता है, वह यह नहीं चाहता की स्वार्थ प्रेरित आदर्श पर आने वाली पीढ़ी भी इसका अनुकरण करे, और वह कहता है :-

"ओ मेरे आत्मज / जीवन की यात्रा में मैंने केवल सुना है /
दया, लोभ स्वार्थ: ये सब चमचे से / मेरे खाली मन के प्याले-
से टकराते हैं / सच मानो ..../ मैं इन्ही की ध्वनि हूँ विस्फोट-
से परिचित हूँ / मेरी ये खोखली ध्वनियाँ / तुम्हारी निधियाँ नहीं/
मेरी हैं / मुझे उन्हे अपने साथ ले जानें दो । §3§

---

1. एक कन्ठ विषपायी - कवि दुष्यन्त कुमार - पृ0 - 133
2. दशरथ की अस्थि - कवि लक्ष्मी कान्त वर्मा
3. -वही-

दशरथ के माध्यम से कवि ने स्पष्ट किया है, कि इस स्वार्थ प्रेरित मूल्यों के कारण ही व्यक्ति के आपसी रिश्तों में दरार आई है, हर परिवार में इस बात के आधार पर अलगाव हुआ है, जिससे समाज में परिवार में प्रगति में विकास के रास्तों में रूकावटें आती हैं, इस काव्य में शासन-सत्ता एवं शासक द्वारा अनुमोदित मूल्यों के आड़ में हो रहे अत्याचार, भ्रष्टाचार, तथा अमानवीकरण का जोरदार विरोध किया गया है, "कवि लक्ष्मीकान्त वर्मा यह स्वीकार करते हैं, कि वर्तमान जीवन बड़ा ही संघर्षशील है, जिसमें मनुष्य को अनेक दुखः दर्द, भूख-प्यास, चोरी-लूट, अन्याय, सत्य, असत्य, बेईमानी, भ्रष्टाचार, धोखेबाजी, आदि से लड़ना है । एक उद्धरण द्रष्टव्य है :-

" जीर्ण हाथ / पोली छाती / खोखली आवाज / पथराई आँखें / झुकी रीढ़/
गाण्डीव धनुष-सा स्वयं ही झुका - झुका / हाथ में परमिट /
आँख में स्थिरता लिये / इस दुकान पर, मौन पंक्ति बद्ध । /
प्रत्यंचा की डोर को राशन की दुकान पर / खरीदता हुआ अर्जुन /
यह किसका है । ? [1]

यह बात बिल्कुल सत्य सी लगती है, कि विज्ञान ने जिस तर्क शक्ति को प्रोत्साहित किया है, जिसके कारण ईश्वर के प्रति व्यक्ति का लगाव कम हुआ है, और इसी कारण ईश्वरीय भय का लोप हुआ है, जिसके कारण व्यक्ति की नैतिकता को गहरा आघात पहुँचा है, इससे समाज में,देश में, भ्रष्टाचार, अनाचार, पापाचार, अत्याचार, में वृद्धि हुई है, विज्ञान के कारण विकसित हुई यांत्रिक सभ्यता के कारण मनुष्य का जीवन कितना संकीर्ण और भौतिक सुख सुविधाओं में दब कर रह गया है, घर के सुख, पत्नी सुख, पुत्र, माँ - बाप, सगे सम्बन्धी, रिश्तों आदि के सुख - दुःख में शामिल होने का उसके पास समय ही नहीं है, निम्न पंक्तियाँ देखिए :-

" और मेरा महाभिनिष्क्रमण / जो मिल की सायरेन के साथ मुँह अँधेरे -
ही हो जाता है, और तथागत-सा / जो मैं ओवर टाइम करके -
आधीरात वापस आता हूँ / ठन्डे चूल्हे और साफ चौके को देख /
तुम्हारी बीतराग-स्थिति पर मन ही मन / उपदेश देता हूँ - बिना-
श्रृंगार किए, अस्त-व्यस्त/जीर्ण स्नेह के क्षणों में भी/ तुम मुझे यशोधरा-
सी - वियोगिनी/बिना लोरियों के जीनें वाली/केवल यशोधरा
लगती हो । [2]

---

1. दशरथ की अस्थि - कवि लक्ष्मी कान्त वर्मा
2. "एक गाथा" - कवि - लक्ष्मीकान्त वर्मा

साठोत्तरी कवियों ने मिथक के माध्यम से पूँजी-पति एवं श्रमिक के बीच के रिश्तों को भी अभिव्यक्त किया है, और इसके साथ-वैज्ञानिक आविष्कार के कारण व्यक्ति को सुख - सुविधा तो बढ़ी किन्तु उसने भावुकता को त्याग कर बौद्धिक चिन्तन से जुड़ा व्यक्ति, उसकी चिन्तन शक्ति ने प्राचीन मूल्य, आदर्श, आचरण, व्यवहार आदि के सामने प्रश्न चिन्ह लगा दिया ।

इन्ही कारणों के द्वारा वर्तमान युग में, प्राचीन मूल्यों में गिरावट आयी, और साथ ही ` साथ दया, भाव, दान, कर्म, वीरता, ज्ञान, भक्ति, त्याग इन सब बातों से हटकर व्यक्ति धन, लोभ, काम, की ओर बढ़ा है । शहर का व्यक्ति गाँव के व्यक्ति को ठग रहा है, उसका शोषण कर रहा है, आचरण और विचार में आई इस गिरावट के कारण कई प्रश्न उठ खड़े हुए, जिसका जिक्र "हरिवंश राय बच्चन" ने अपने काव्य संग्रह "बुद्ध और नाचघर" में संकलित इसी शीर्षक की कविता में कवि ने बुद्ध के जीवन की कुछ प्रमुख घटनाओं वर्णन करते हुए आज की सुख-सुविधाओं पर प्रहार किया है, आज का व्यक्ति किस तरह से इन चीजों के पीछे दौड़ रहा है, जिन वस्तुओं का विरोध "महात्मा गाँधी" ने तथा "गौतम बुद्ध- ने किया, वहीं बातें आज हर जगह दृष्टिगत हो रही है । एक उदृरण दृष्टव्य है :-

" बुद्ध भगवान / अमीरों के ड्राइंग रूम / रईसों के मकान /
तुम्हारे चित्र, तुम्हारी मूर्ति से / शोभायमान/ पर वे हैं तुम्हारे -
दर्शन से अनभिज्ञ / तुम्हारे विचारों से अनजान /
सपने में भी उन्हे इसका नहीं आता ध्यान /
शेर की खाल, हिरण की सींग / कला - कारीगरी के नमूनों -
साथ तुम भी हो आसीन,/ लोगों की सौन्दर्य - प्रियता को /
देते हुए तसकीन, / इसी लिए तुमनें एक की थी / आसमान जमीन/" ॥1॥

गौतम बुद्ध ने जिन-जिन चीजों को अपने धर्म में निषेध माना, और उनके दिये गये सभी उपदेशों का आज उल्टा हो रहा है, आधुनिक युग में बुद्ध की सारी साधना बुद्ध के अस्तित्व को भी खतरा पैदा हो गया है, अहिंसा के समर्थक परम विरक्त बुद्ध की मूर्ति को नाच घरों में सजा दिया और उनकी मूर्ति के सामने आदर्शों का उल्लंघन हो रहा है, निम्न उदृरण दृष्टव्य है :-

" हे पशुओं पर दया के प्रचारक,/अहिंसा के अवतार,/
परम विरक्त / संयम साकार / मची है तुम्हारे सामने यौवन

---

1. बुद्ध और नाचघर - कवि - हरिवंश राय बच्चन

की ठेल - मेल,/ इच्छा और वासना खुलकर रही है खेल, /
गाय - सूअर के गोश्त का उड़ रहा है कबाब / गिलास पर-
गिलास पी जा रही है शराब । " §1§

" युवकों ने युवतियों को खींच/लिया है बाँहों में भींच/
छाती और सीने आ गए हैं पास / होठों अंधरों के बीच /
शुरू हो गई है बात / शुरू हो गया है नाँच । §2§

" निकलती है आवाज-बुद्धं शरणं गच्छामि, /
मांस शरणं गच्छामि / डांसं शरणं गच्छामि । §3§

यह आधुनिक युग तथा वर्तमान समय की एक ज्वलंत समस्या है, खास कर के युवा पीढ़ी आज मादक द्रव्यों के पीछे पागल हैं, वह किसी भी नशे को आज मुक्ति और आराम का साधन मान रहा है, मानसिक शान्ति के लिए वह व्यसन को साधन के रूप में प्रयोग कर रहा है, जिससे उसके मन को, बेकारी को, पारिवारिक झंझट से मुक्ति मिले, व्यक्ति समाज परिवार, राष्ट्र किस तरफ जा रहा है, उसका उद्देश्य क्या है, आदर्श आचरण में आई इन्ही विसंगतियों के कारण व्यक्ति अपनी मर्यादा, शर्म खो चुका है, धर्म के नाम पर व्यभिचार, मठो,मंदिरों, मस्जिदों में बैठे यह पन्डा और पूजारी मुल्ला आदि देवी-देवताओं का अपमान कर रहे हैं, जिसके कारण धर्म में संकीर्णता आई है, लोगों का विश्वास एक ही ईश्वर पर से कम हो रहा है, जिसके प्रति नये, कवियों, ने चिंतकों ने, मिथकीय कविता के माध्यम से अपनी चिन्ता को प्रकट किया है ।

मंदिर, मस्जिद, बौद्ध मठ, गिरिजाघर आदि एक जमाने में जहाँ लोग सुबह-शाम जाकर ईश्वर का ध्यान करते था, जहाँ लोगों को थोड़ी देर शान्ति प्राप्त होती थी, आज वही स्थान अशान्ति का केन्द्र बन गये हैं, वहीं आज बम फट रहे हैं, चरस गांजा भांग, शराब के साथ-साथ चोर डाकुओं, तथा आतंकवादियों के छिपने के अड्डे के रूप में प्रयोग हो रहा है, गुरूद्वारों में हथियार बनाये जा रहे हैं, "कवि धूमिल" की निम्न पंक्तियाँ इसका सटीक उदाहरण है :-

---

1. बुद्ध और नाचघर - कवि हरिवंश राय बच्चन
2. -वही-
3. -वही-

मैंने अचरज से देखा कि दुनियाँ का
सबसे बड़ा बौद्ध मठ,
बारूद का सबसे बड़ा गोदाम है,
अखबार के मटमैले हासिए पर लेटे हुए
एक तटस्थ और कोढ़ी देवता का
"शान्तिवाद" नाम है। यह हमारा देश है । §1§

गाँवों का विकास किया जा रहा है, गाँवों की नैसर्गिक छटा, हरेभरे खेतों बाग-बगीचों तथा कच्ची सड़कों को विदेशी तारकोल से बेलौंस किया जा रहा है, एक उद्धरण देखें :-

सुनों - सुनों
यहीं कहीं एक कच्ची सड़क थी,
जो मेरे गाँव को जाती थी,
अब वह कहाँ गई ?
किसने कहा उसे पक्की सड़क में बदल दो
उसकी छाती बेलौंस कर दो
स्याह कर दो यह नैसर्गिक छटा
विदेशी तारकोल से । §2§

उन हरे भरे खेतों तथा बाग - बगीचों की जगह धुआँ उगलती हुई मीलें, कल कारखानें, स्थापित किये जा रहे हैं, शैक्षणिक संस्थाओं में सुधार के बजाय घपलेबाजी होती रही हैं, विद्यार्थी, शिक्षक, संस्था, कर्मचारी, साथ ही शिक्षा मंत्री भी त्रस्त हो उठे हैं, बेकारी भी खूब बढ़ी है । एक उद्धरण देखें :-

" खून पसीना किया बाप ने एक जुटाई फीस
आँख निकल आये पढ़कर जब नम्बर आये तीस ।
शिक्षा मंत्री ने सिनेट से कहा अजी शाबास,
सोना हो जाता हराम यदि ज्यादा होते पास
फेल पूत का पिता दुःखी है, सिर धुनती है माता ।
जनगण मन अधिनायक जय है, भारत भाग्य विधाता"। §3§

अंत में कहा जा सकता है कि आज का कवि सर्वत्र फैली अव्यवस्था से शोकाकुल हैं, विघटित मूल्यों की छटपटाहट उसकी आख्यानक कविताओं में देखी

---

1. संसद से सड़क तक - धूमिल - पृ0 - 48
2. बांस का पुल - सर्वेश्वर दयाल सक्सेना - पृ0 - 44
3. नयी कविता - नागार्जुन - सम्पादक - डॉ0 वासुदेव प्रसाद - पृ0 - 11

जा सकती है। इन पौराणिक संदर्भों के माध्यम से वह कभी अपने विगत पुराण-पुरुष से शिकायत करता है, कभी अपनी नाराजगी व्यक्त करता है , उसके स्वरों में आक्रोश है तो व्यवस्था के नैतिक क्षरण के कारण उपालम्भ है तो समर्थ राजदण्ड के भ्रष्ट मूल्यों के लिए लगता है जैसे इस दिक्भ्रमित पीढ़ी की कमजोर मानसिकता को उजागर करता हुआ वह पौराणिक नैतिक मूल्यों के दरवाजे खटखटाता है । वह "तमसो मा ज्योतिर्गमय " की अश्वस्त मुद्रा धारण का यत्न करता है ।
" पुराणमित्येव ना साधुसर्व " की अविधारणा भी उसकी अन्तर्यज्ञ में समाविस्ट है, जिसके तहत वह द्रोणाचार्य की एकलव्यीन व्यवस्था को धिक्कारता है, वह शंकर के दम्भ को अस्वीकार करता है, संशय की रात्रि में विचरण करता हुआ वह अनेक अस्वीकारों से गुजरता है और फिर नैराश्य के तमावृत परिवेश में एक क्लीन जिजीविषा के अंक में छटपटा कर रह जाता है । वह राष्ट्रीय क्षितिज पर फैली भ्रष्टाचारिता तथा अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में फैले यौद्धिक षड्यन्त्रों के समायोजन से भी भयातुर है । उसका अन्तर्मन चीख उठता है -

" आओ हम तुम हस्ताक्षर करें,
संधियाँ जियें,
द्रोपदियाँ हारें,
युद्ध संयोजें,
निर्वासित हों,
रोएँ, कलपें
प्रलय भेटें
बीज समेटें
नाव ढूढ़ें,
मनु बनें, शतरूपा खोजें
फिर से सृष्टें
नया उपवन - नई वाटिका,
नए कलख, नया गीत मधुर संगीत
यह सब को
प्रस्तुत है
परोसा गया है कलात्
भक्षणीय नहीं है,
इसे नकारें, इसे धिक्कारें,
स्वयं में स्वयं के होने का एहसास जगाएँ ।
जिन्दा रहें, जिन्दा रहने तक ।"[1]

---

1. अपना-अपना कुरुक्षेत्र - डॉ० विष्णु विराट

साठोत्तरी हिन्दी की आख्यानक कविताएँ अपने पौराणिक संदर्भों के सार्थक प्रतीकों के माध्यम से इस प्रसंग में अपनी सही भूमिका का निर्वाह कर सकी हैं। अनेक सशक्त हस्ताक्षर इस संदर्भ में उल्लेखनीय कृतियाँ लेकर समुपस्थित हुए हैं । बहुत कुछ सत्यं शिवं और सुन्दरं भी कहने का यत्न किया गया है ।

अगले अध्याय में पौराणिक कृतियों के विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत किये जा रहे हैं ।